बन्दी-जीवन

प्रथम भाग

(उत्तर भारत में क्रान्ति का उद्योग)

श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल

अनुवादक —
श्री लक्ष्मीप्रसाद पाण्डेय

हिन्दी भवन
हास्पिटल रोड, अनारकली
लाहौर

ीसरी बार] [मूल्य ।।।)

प्रकाशक—
श्री जितेन्द्रनाथ सान्याल,
कर्नलगञ्ज, इलाहाबाद।

पुस्तक मिलने के मुख्य मुख्य स्थान।

इलाहाबाद— (१) ओझाबन्धु आश्रम प्रयाग।
(२) साहित्य भवन, जानसेनगज।
(३) छात्र हितकारी पुस्तकालय, दारागज।
(४) हिन्दी मन्दिर, जानसेनगज।

कलकत्ता—(१) हिन्दी पुस्तक एजन्सी,
२०३, हैरिसनरोड।
(२) कलकत्ता पुस्तक भडार
१७१ ए हैरिसनरोड।
(३) चाँद बुकडिपो,
१९५ हैरिसनरोड।

कानपुर—प्रकाश पुस्तकालय।

आगरा—साहित्य रत्नभडार, किनारी बाजार।

बनारस—पुस्तक भवन, ज्ञानवापी।

लखनऊ—गगा पुस्तकमाला,
२९ ३०, अमीनाबाद पार्क।

लाहौर—हिन्दी भवन, हास्पिटल रोड।

मुद्रक—
विद्या प्रकाश प्रेस,
लाहौर

समर्पण

जिन के चरण कमलों मे आत्मोत्सर्ग करने के व्यर्थ उद्योग में जीवन बिता रहा हूँ—जिन की इच्छा स पापी पापाचरण करके पाप सञ्चय करता और धर्मात्मा पुण्य करके पुण्यवान् होता है—जीवन की सारी व्यर्थताओं में जिन के आश्रय का मैं भिखारी रहा हूँ—सब प्रकार से वञ्चित और प्रपीडित होने पर भी, अपने कर्म के दोष से सारे अधिकार गवाँ कर सब तरह से दीन और कङ्गाल होने पर भी जिन के नाम लेने के अधिकार से कभी कोई वञ्चित नहीं होता—उन्हीं लीलामय के चरण कमलों मे अपने साहित्यिक प्रयत्न के इस प्रथम फल को अर्पण करता हूँ।

श्री शचीन्द्रनाथ

भूमिका

किसी समाज को पहचानने के लिए उस समाज के साहित्य से परिचित होने की परम आवश्यकता होती है, क्योंकि समाज के प्राणों की चेतना उस समाज के साहित्य में भी प्रतिफलित हुआ करती है। आज भारत जो बनाने और मिटाने के बीच क्रमश अपनी सार्थकता को खोजता फिरता है सो भारत का समाज यदि सजीव होगा तो भारत के प्राणों की इस अशान्ति का चित्र उसके साहित्य में अवश्य ही अपने प्रतिबिम्ब को अङ्कित कर देगा। हम भारतवासी आज यह नहीं जानते कि इस अशान्त अटूट गति का वेग कितना प्रचण्ड है किन्तु हमारे पश्चात् आने वाली पीढी इस गति के वेग को बखूबी बतला सकेगी। भारत के इस बनाने मिटाने के उद्योग के बीच जितनी बडी शक्ति का स्फुरण हो रहा है उसके स्वरूप को जानने का समय शायद अभी आया नहीं। इस बनाव बिगाड का एक चित्र—भले ही वह अस्पष्ट और मलिन हो—भारत की इस भाग्य-परीक्षा की एक धुन्धली सी छाया, आज भारत के साहित्य में भी धीरे धीरे प्रकट हो रही है। इसी से 'निर्वासन काहिनी," "कारा काहिनी," "द्वीपान्तरेर कथा," 'निर्वासितेर आत्म कथा," और "बाङ्गलाय विप्लव वाद" आदि ग्रन्थ बङ्ग भाषा के साहित्य में क्रमश प्रकाशित हो रहे हैं। भारत के प्राण आज जैसे कुछ छटपटा रहे हैं, उस छटपटाहट-अशान्ति का पूरा स्वरूप उसके साहित्य में प्रकाशित नहीं हो सका, अभी नहीं हुआ तो न सही, क्रमश आगे होगा। "निर्वासितेर आत्म कथा" इत्यादि पुस्तकें जिस

श्रेणी की हैं उस श्रेणी के अन्तर्गत मेरा "वन्दी जीवन" भी है। इस श्रेणी की कई पुस्तकें जब पहले से मौजूद थीं तब फिर यह "वन्दी जीवन" मैंने क्यों लिखा। इसका विशेष कारण सुन लीजिए।

(१) मुझे यह कहना है कि सजीव जातियों में छानवीन करने की प्रवृत्ति बहुत प्रबल होती है। इस जाँच पडताल करने की की प्रवृत्ति के कारण ही सजीव जातिया अपने समाज के रत्ती रत्ती समाचार के लिए चौकन्नी रहती हैं। शायद एक देहाती के वेदाग् वंशवृक्ष का पेड पत्ता जानने में किसी ने अपनी सारी उम्र इस आशा से बिता दी कि इस प्रकार तथ्य संग्रह कर देने से कदाचित् किसी दिन वंशानुक्रम की धारा का पता लगाने में सुभीता हो जाय। भारत के वर्तमान समाज की भीतरी वेदना का परिचय, परिमाण और कारण जानने का समय क्या अभी तक उपस्थित नहीं हुआ ? उस भीतरी वेदना—दर्दे दिल—को हटा देने की इच्छा से भारत में जो अभिनव आन्दोलन आरम्भ हुआ है वह आन्दोलन कितना व्यापक और गम्भीर है, कहा कहा पर उस में कोर कसर और भूल चूक रह गई है, वह आन्दोलन किस परिमाण मे सार्थक हुआ और कितना अपूर्ण रह गया है तथा उस में यह अधूरापन क्यों रह गया है—इन सारी बातों का जान लेना क्या प्रत्येक भारतवासी का कर्त्तव्य नहीं ? इन सारी बातो को जानने के लिए उस ढग की बहुतेरी पुस्तकों के प्रकाशित होने की आवश्यकता है जिस ढ ग का कि 'वन्दी-जीवन" है। ऐसी ऐसी जितनी पुस्तकें प्रकाशित होगी मुख्य विषय को समझना उतना ही आसान हो जायगा।

(२) मेरा वक्तव्य यह है कि "कारा काहिनो" के ढग की जितनी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं उन में अरविन्द बाबू की "कारा काहिनी" और बाबू नलिनीकिशोर-लिखित "बाङ्गलाय विप्लव-वाद" नामक पुस्तकें मुझे सर्वश्रेष्ठ जँचीं। हा अरविन्द, बाबू ने सिर्फ कलकत्ते के कारागार की ही कथा लिखी है, और मैं चाहता हू कि लाहौर, बनारस, कलकत्ता और अन्दमान की बातें इसी ढ ग से लिखूँ तथा इस सिलसिले में पँजाब, युक्त-प्रदेश, बङ्गाल और अगरेज शासित भारत के अन्यान्य प्रदेशो के मानव चरित्र की भी थोडी बहुत चर्चा करूँ। सच पूछो तो 'बाङ्गलाय विप्लव-वाद' के लेखक ने वे बातें मेरी अपेक्षा कहीं अच्छे ढ ग से प्रकट कर दी हैं जो कि मुझे कहनी हैं, भाषा पर यद्यपि मेरा उनकी भाँति अधिकार नहीं है, फिर भी अभी तक बहुतेरी बातें प्रकट करने को रह गई हैं, बङ्गाल की बातो का वर्णन करते समय मैं उनकी चर्चा करना चाहता हूँ। मैं बखूबी जानता हूँ कि भाषा के हिसाब से मैं सुन्दर नहीं लिख सका, और इस दृष्टि से तो उपेन्द्र बाबू की पुस्तक के साथ किसी की भी पुस्तक टक्कर लेने योग्य नहीं। ताना देने और मजाक करने की ऐसी कुशलता बङ्गाल में कदाचित् ही किसी और लेखक में हो। उपेन्द्र बाबू निस्सन्देह बङ्गाल के शक्तिशाली लेखक हैं। किन्तु उन की "आत्म-कथा" में बहुत ही गुरुतर विषयों की आलोचना भी निल्कुल साधारण रीति पर की गई है। मानो उन का हसी में कौतुक है। इसी कारण "निर्वासितेर आत्म-कथा" चित्ताकर्षक होने पर भी मर्मस्पर्शिनी नहीं हुई। और बारीन्द्र बाबू की 'द्वीपान्तरेर कथा' में जो

श्रेणी की हैं उस श्रेणी के अन्तर्गत मेरा "वन्दी जीवन" भी है। इस श्रेणी की कई पुस्तकें जब पहले से मौजूद थीं तब फिर यह "वन्दी जीवन" मैंने क्यों लिखा। इसका विशेष कारण सुन लीजिए।

(१) मुझे यह कहना है कि सजीव जातियों में छानबीन करने की प्रवृत्ति बहुत प्रबल होती है। इस जाँच पड़ताल करने की की प्रवृत्ति के कारण ही सजीव जातिया अपने समाज के रत्ती रत्ती समाचार के लिए चौकन्नी रहती हैं। शायद एक देहाती के बेदाग् वंश-वृक्ष का पेड़ पत्ता जानने में किसी ने अपनी सारी उम्र इस आशा से बिता दी कि इस प्रकार तथ्य संग्रह कर देने से कदाचित् किसी दिन वंशानुक्रम की धारा का पता लगाने में सुभीता हो जाय। भारत के वर्तमान समाज की भीतरी वेदना का परिचय, परिमाण और कारण जानने का समय क्या अभी तक उपस्थित नहीं हुआ? उस भीतरी वेदना—दर्दे दिल—को हटा देने की इच्छा से भारत में जो अभिनव आन्दोलन आरम्भ हुआ है वह आन्दोलन कितना व्यापक और गम्भीर है, कहा कहा पर उस में कोर कसर और भूल चूक रह गई है, वह आन्दोलन किस परिमाण में सार्थक हुआ और कितना अपूर्ण रह गया है तथा उस में यह अधूरापन क्यों रह गया है—इन सारी बातों का जान लेना क्या प्रत्येक भारतवासी का कर्त्तव्य नहीं? इन सारी बातों को जानने के लिए उस ढग की बहुतेरी पुस्तकों के प्रकाशित होने की आवश्यकता है जिस ढ ग का कि 'वन्दी जीवन" है। ऐसी ऐसी जितनी पुस्तकें प्रकाशित होंगी मुख्य विषय को समझना उतना ही आसान हो जायगा।

(२) मेरा वक्तव्य यह है कि "कारा काहिनी" के ढग की जितनी पुस्तके प्रकाशित हुई हैं उन में अरविन्द बाबू की "कारा काहिनी" और बाबू नलिनीकिशोर-लिखित "बाङ्गलाय विप्लव-वाद" नामक पुस्तकें मुझे सर्वश्रेष्ठ जँचीं। हा अरविन्द, बाबू ने सिर्फ कलकत्ते के कारागार की ही कथा लिखी है, और मैं चाहता हू कि लाहौर, बनारस, कलकत्ता और अन्डमान की बातें इसी ढ ग से लिखूँ तथा इस सिलसिले में पँजाब, युक्त-प्रदेश, बङ्गाल और अगरेज शासित भारत के अन्यान्य प्रदेशों के मानव चरित्र की भी थोडी बहुत चर्चा करूँ। सच पूछो तो 'बाङ्गलाय विप्लव-वाद' के लेखक ने वे बातें मेरी अपेक्षा कहीं अच्छे ढ ग से प्रकट कर दी हैं जो कि मुझे कहनी हैं, भाषा पर यद्यपि मेरा उनकी भाँति अधिकार नहीं है, फिर भी अभी तक बहुतेरी बातें प्रकट करने को रह गई हैं, बङ्गाल की बातों का वर्णन करते समय मैं उनकी चर्चा करना चाहता हूँ। मैं बखूबी जानता हूँ कि भाषा के हिसाब से मैं सुन्दर नहीं लिख सका, और इस दृष्टि से तो उपेन्द्र बाबू की पुस्तक के साथ किसी की भी पुस्तक टक्कर लेने योग्य नहीं। ताना देने और मजाक करने की ऐसी कुशलता बङ्गाल में कदाचित् ही किसी और लेखक में हो। उपेन्द्र बाबू निस्सन्देह बङ्गाल के शक्तिशाली लेखक हैं। किन्तु उन की "आत्म-कथा" में बहुत ही गुरुतर विषयों की आलोचना भी बिल्कुल साधारण रीति पर की गई है। मानो उन का हसी में कौतुक है। इसी कारण "निर्वासितेर आत्म-कथा" चित्ताकर्षक होने पर भी मर्मस्पर्शिनी नहीं हुई। और बारीन्द्र बाबू की 'द्वीपान्तरेर कथा' में

भाग उपेन्द्र बाबू का लिखा हुआ है वही मुझे अच्छा लगा। उक्त पुस्तक का आधे से भी अधिक अंश उपेन्द्र बाबू का ही लिखा हुआ है। बाबू बारीन्द्रकुमार घोष ने यद्यपि पहले ही लिख दिया है कि 'यह दो मुहों की ही एक बात है" किन्तु यह सभी की समझ मे आजाता है कि यह दो मुहो की साफ साफ अलग बातें हैं। बारीन्द्र बाबू के लिखे हुए अश मे, बीच बीच में यद्यपि खासा कवित्व है तथापि सच तो यह है कि उसमे भी विप्लव वादियो की मर्म कथा प्रकट नहीं हुई। इसके सिवा इस द्वीपान्तर की कथा की बहुतेरी बातें आसानी से दबा दी गई है। ऐसा क्यो हुआ है, इस का विचार यथास्थान करने की इच्छा है।

"बन्दी-जीवन" के इस खण्ड में यही लिखने की चेष्टा की गई है कि यूरप के महायुद्ध के समय भारत मे क्रान्ति की कैसी क्या तैयारी की गई थी। रौलट रिपोर्ट में यद्यपि यह पहलू बिल्कुल ही छिपा दिया गया है तथापि टाइम्स हिस्ट्री आव् दी ग्रेट बार (Time's History of the Great War, volume dealing with India) नाम की पुस्तक मे भी इस का थोडा सा उल्लेख आ गया है। माना कि क्रान्ति की इस तैयारी का उपयोग नही किया जा सका, फिर भी सफलता या विफलता के दृष्टिकोण से इसका फैसला करना ठीक नहीं। पितामह भीष्म का महत् चरित्र क्या कुरुक्षेत्र के महा संग्राम में उनकी हार जीत पर अवलम्बित है?

इस पुस्तक के दूसरे खण्ड मे यह बतलाने की इच्छा है कि युद्ध छिड़ने से प्रथम भारतीय विप्लववादियों की क्या दशा

थी और उनके मन की गति ने किस किस प्रकार आघात लगने से कैसा क्या भाव धारण किया था। इस के पश्चात मेरे फरार हो जाने की दशा का, फिर गिरफ्तार होने और मुकदमा चलने एवं बन्दी-जीवन के वर्णन करने का विचार है। मेरी गिरफ्तारी हो जाने के बाद भी भारत मे और बर्मा मे जिस प्रकार षड्यन्त्र किया जा रहा था उसका भी वर्णन करने का इरादा है।

सुना है कि बारीन्द्र कुमार के साथी उल्लासकर दत्त अन्दमान टापू में कहते थे "कि बड़े सख्त लोगों से काम पड़ा है, ये हाड और माँस तो खायेंगे ही इसके सिवा चमड़ी से डुगडुगी मढ कर बजावेंगे।" ऐसे सख्त लोगों के हाथ से मुझे कैसे छुटकारा मिला था, इसका भी अंत मे वर्णन करने की अभिलाषा है। जीवन में तरह तरह की चोटें लगने से अंत में मन की क्या दशा हुई, उस को एक खंड मे न कहकर क्रमश स्पष्ट करने की चेष्टा की जायगी। मैं तो अब तक समझता हूँ कि यह पुस्तक तीन खण्डो में समाप्त होगी किंतु "गृह कारज नाना जञ्जाला" में पड़कर नहीं कह सकता कि कितना लिख सकूंगा। इस दुविधा का कारण यही है कि अभी तक मैं किसी काम को निर्विघ्न पूर्ण नहीं कर सका।

५ अगस्त १९२२
फलकत्ता

श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल

भाग उपेन्द्र बाबू का लिखा हुआ है वही मुझे अच्छा लगा। उक्त पुस्तक का आधे से भी अधिक अंश उपेन्द्र बाबू का ही लिखा हुआ है। बाबू बारीन्द्रकुमार घोष ने यद्यपि पहले ही लिख दिया है कि 'यह दो मुहों की ही एक बात है" किन्तु यह सभी की समझ में आजाता है कि यह दो मुहों की साफ साफ अलग बातें हैं। बारीन्द्र बाबू के लिखे हुए अंश में, बीच बीच में यद्यपि खासा कवित्व है तथापि सच तो यह है कि उसमें भी विप्लव वादियों की मर्म कथा प्रकट नहीं हुई। इसके सिवा इस द्वीपान्तर की कथा की बहुतेरी बातें आसानी से दबा दी गई है। ऐसा क्यो हुआ है, इस का विचार यथास्थान करने की इच्छा है।

"बन्दी-जीवन" के इस खण्ड में यही लिखने की चेष्टा की गई है कि यूरप के महायुद्ध के समय भारत में क्रान्ति की कैसी क्या तैयारी की गई थी। रौलट रिपोर्ट में यद्यपि यह पहलू बिल्कुल ही छिपा दिया गया है तथापि टाइम्स हिस्ट्री आव् दी ग्रेट वार (Time's History of the Great War, volume dealing with India) नाम की पुस्तक मे भी इस का थोडा सा उल्लेख आ गया है। माना कि क्रान्ति की इस तैयारी का उपयोग नहीं किया जा सका, फिर भी सफलता या विफलता के दृष्टिकोण से इसका फैसला करना ठीक नहीं। पितामह भीष्म का महत् चरित्र क्या कुरुक्षेत्र के महा संग्राम मे उनकी हार जीत पर अवलम्बित है ?

इस पुस्तक के दूसरे खण्ड में यह बतलाने की इच्छा है कि युद्ध छिडने से प्रथम भारतीय विप्लववादियो की क्या दशा

थी और उनके मन की गति ने किस किस प्रकार आघात लगने मे कैसा क्या भाव धारण किया था। इस के पश्चात् मेरे फरार हो जाने की दशा का, फिर गिरफ्तार होने और मुकदमा चलने एव बन्दी-जीवन के वर्णन करने का विचार है। मेरी गिरफ्तारी हो जाने के बाद भी भारत मे और वर्मा में जिस प्रकार षड्यन्त्र किया जा रहा था उसका भी वर्णन करने का इरादा है।

सुना है कि वारीन्द्र कुमार के साथी उल्लासकर दत्त अन्दमान टापू मे कहते थे "कि बड़े सख्त लोगों से काम पडा है, ये हाड और माँस तो खायेंगे ही इसके सिवा चमडी से डुगडुगी मढ कर बजावेंगे।" ऐसे सख्त लोगों के हाथ से मुझे कैसे छुटकारा मिला था, इसका भी अत में वर्णन करने की अभिलाषा है। जीवन मे तरह तरह की चोटें लगने से अत में मन की क्या दशा हुई, उस को एक बात में न कहकर क्रमश स्पष्ट करने की चेष्टा की जायगी। मैं तो अब तक समझता हूँ कि यह पुस्तक तीन खण्डों में समाप्त होगी किंतु "गृह कारज नाना जञ्जाला" मे पडकर नहीं कह सकता कि कितना लिख सकूंगा। इस दुविधा का कारण यही है कि अभी तक मैं किसी काम को निर्विघ्न पूर्ण नहीं कर सका।

२५ अगस्त १९२२
कलकत्ता

श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल

निवेदन



आज भूतकाल की बातें लिखने बैठा हूँ। वह समय आज बहुत ही महिमामय जान पड़ता है। जान पड़ता है कि जिस प्रकार समय अनन्त है उसी प्रकार उस की महिमा भी अनन्त-अपार है। ऐसा जँचता है कि समय मानो उसे सुन्दर बना देता है जो कि सुन्दर नहीं है, वह असङ्गति में भी सङ्गति मिला देता है, बेढङ्गी नहीं रहने देता। समय की महिमा विचित्र है, उस की कृपा से अप्रिय की स्मृति भी प्रिय हो जाती है।

असल में अतीत—गुजरे हुए—की स्मृति बड़ी मीठी होती है, वह वीणा के तार के सोये हुए झङ्कार की तरह आघात करते ही मधुर भाव से झङ्कार करने लगती है।

कई बार पिछली बातों की याद दुख भी कम नहीं देती। किन्तु उस दुख दर्द के बीच भी मानो सुख रहता है। उस समय चित्त का मर्मस्थल तक खुल जाता है। उस अवसर पर अपने आप के साथ बिलकुल निर्जन मे, बहुत ही गुप्त रूप से, बात चीत होती है।

आशा और निराशा, सुख और दुख, मानो जिन्दगी भर हमारे साथ खिलवाड़ करते हैं, किन्तु लगातार बहुत दिनों तक इनमे कोई नहीं टिकता। सभी दो दिन दर्शन देकर—हँसा कर या रुला कर—चले जाते हैं, सिर्फ उनकी याद रह जाती है।

स्मृति-पट पर बहुतेरी बड़ी चीजें छोटी हो जाती हैं और

छोटी चीजें वडा रूप धारण कर लेती हैं—कुछ चीजें ऐसी भ
हैं जो मन में ऐसी जा छिपती हैं कि फिर उनको ढूढ निक
लना कठिन होजाता है।

वनारस षड्यन्त्र मे मुझे सजा हुई थी। सन १९१५ क
२६वीं जून को मैं गिरफ्तार हुआ और १४ फरवरी-सन् १९१
को आजन्म कालेपानी का तथा सारी सम्पत्ति जप्त होने क
दण्ड मिला। इसके अनन्तर कुछ दिन तक तो काशी के कार
गार में ही रहा, फिर अगस्त महीने में अन्दमान द्वीप क
रवाना कर दिया गया। अगस्त की १८वीं तारीख को मै उस
द्वीप के जेलखाने में दाखिल किया गया। फिर इच्छामय क
इच्छा के अनुसार फरवरी सन् १९२० मे सम्राट् के घोषणापत्र
के कारण रिहा किया गया।

वस, सन १५ से लेकर सन् २० के आरम्भ तक मेर
वदी जीवन रहा। इस 'वदी जीवन' का अवलम्ब ग्रहण करके
मैं वतलाना चाहता हूँ कि आखिर मैं क्यों कैद कर लिया गय
था। यह पुस्तक आज मैं इस लिए लिख रहा हूँ जिसमें कि
भारत के भविष्यत् इतिहास के कुछ अध्याय ठीक ठीक लिखे
जा सकें।

भारत का भाग्य एक महान् युगसन्धि के वीच होकर
दौडता जा रहा है। भारत के भीतर और वाहर क्रान्ति की
भयङ्कर आग, भगवान् की गुप्त प्रेरणा से अपने निर्दिष्ट मार्ग
पर—और वह भी मानो, अपने लिए अनुकूल ववडर वना
कर—फैलती जा रही हैं, ऐसे ही एक ववडर में उसी विधाता
की मर्जी से मैं भी पड गया था।

मेरी ही तरह और भी कुछ युवा पुरुष, अपने मर्मस्थल की व्यक्त वेदना से अधीर होकर, जान बूझ कर या वे-समझे-बूझे विधाता का अभीष्ट सिद्ध करने के लिए ही दलबद्ध होगये थे। मुद्दत से मैं चाहता था कि उस दल के भीतरी परिचय का, जो कि काम काज के बाहरी आडम्बर में छिप गया था, एक संक्षिप्त इतिहास लिखूँ। आज उसी वासना को चरितार्थ करने की चेष्टा करता हूँ।

हम लोग अक्सर घटना को ही महत्व दे देते हैं—उसी को बड़े आकार में देखते हैं, किन्तु यह नहीं समझते कि घटना की ओट में—फिर वह घटना कितनी ही क्षुद्र क्यों न हो—महाशक्ति की लीला रहती है, और वही असल में घटना की अपेक्षा बहुत मूल्यवान् होती है। सफलता का मोह हम लोगों को प्रति पद पर घेरता है। विचार के द्वारा उस मोह का छेदन हो जाने पर भी प्राण उस मोहावेश को काट कर अलग कर देने में समर्थ नहीं होते। किन्तु बड़ी बड़ी घटनाओं के मुकाबिले में जीवन को बिताने की मामूली बातें भी कुछ कम महत्व की नहीं होतीं। घटनाओं का आरम्भ विचार-जगत् में ही हुआ करता है।

इस उपलक्ष्य में व्यक्तिगत चरित्र की आलोचना रहने पर भी वह व्यक्तिगत रूप में न की जायगी। व्यक्ति का परिचय हुए बिना समष्टि से परिचय नहीं हो सकता। इसलिए तो व्यक्तिगत चरित्र की आलोचना आवश्यक होती है।

यह परिचय देने में अपने और अपने दल के बहुतेरे छिद्र प्रकट हो जायँगे। तो इस लिए क्या मैं उन दुर्बलताओं और

सकीर्णताओं को छिपाने की व्यर्थ चेष्टा करूँगा जिन्हों ने कि हमें भीतर ही भीतर पशु बना दिया है ? ऐसी चेष्टा व्यर्थ तो होगी ही, क्योंकि एक न एक दिन सत्य प्रकट होगा और जरूर होगा, और छिपाने का उद्योग करने से न सिर्फ सत्य ही का अपलाप होगा किन्तु उससे तो हमारा पंगुत्व—निकम्मापन—और भी बढ जायगा। इतिहास के पृष्ठों में 'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्' सार्थक नहीं।



बन्दी-जीवन



पहला परिच्छेद

आत्म-समर्पण योग

कलकत्ते के राजाबाजार मुहल्ले मे एक छोटा सा दो-मंजिला खपरैल का मकान था। गरीबों का सा घर जँचता था। इसमें ट्राम-कण्डक्टर या इसी श्रेणी के लोग रहते थे। इसी मकान के ऊपर वाले एक कमरे में श्री शशाङ्क मोहन हाजरा नामक एक युवा पुरुष रहते थे। जिस समय वे गिरफ्तार किये गये उस समय उन के कमरे में बम के ऊपरी खोल मिले और ऐसे लेख भी बरामद हुए जिनमें योगाभ्यास की विधि थी। अदालत में मुकदमा चलते समय किसी किसी ने इन लेखो को महत्वपूर्ण नहीं समझा, कहा कि ये लेख असल में लोगों को फँसाने के लिए हैं। लोगों को गुमराह करने का यह एक जरिया है। लेकिन मैं जानता हूँ कि असल में यह बात न थी। हम लोगो ने सचमुच अपने जीवन में इस साधन (योगाभ्यास) को ग्रहण किया था।



श्री रासबिहारी



श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल

बन्दी-जीवन



पहला परिच्छेद

आत्म-समर्पण योग

कलकत्ते के राजाबाजार मुहल्ले में एक छोटा सा दो-मंजिला खपरैल का मकान था। गरीबों का सा घर जँचता था। इसमें ट्राम-कण्डक्टर या इसी श्रेणी के लोग रहते थे। इसी मकान के ऊपर वाले एक कमरे में श्री शशाङ्क मोहन हाजरा नामक एक युवा पुरुष रहते थे। जिस समय वे गिरफ्तार किये गये उस समय उन के कमरे में बम के ऊपरी खोल मिले और ऐसे लेख भी बरामद हुए जिनमें योगाभ्यास की विधि थी। अदालत में मुकदमा चलते समय किसी किसी ने इन लेखों को महत्वपूर्ण नहीं समझा, कहा कि ये लेख असल में लोगों को फँसाने के लिए हैं। लोगों को गुमराह करने का यह एक जरिया है। लेकिन मैं जानता हूँ कि असल में यह बात न थी। हम लोगों ने सचमुच अपने जीवन में इस साधन (योगाभ्यास) को ग्रहण किया था।

हम लोग सिर्फ मुँह से ही न कहते थे कि भगवान् सभी कामों के नियन्ता हैं, वल्कि सचमुच हृदय से गम्भीर श्रद्धा के साथ उल्लिखित वात पर विश्वास करते थे। अपनी गरज के लिए, अपना काम साधने के लिए ही कुछ भगवान् को न घसीटते थे, किन्तु भगवान् के अधिनायकत्व की आलोचना और भावना मे कितने ही दिन और रात्रियाँ तक विताई हैं।

भारत की छाती पर जो यह महान् आन्दोलन हो चुका और हो रहा है, यह उन्हीं की इच्छा से हुआ और हो रहा है, हम लोगो का यही विश्वास है। जिस भाव की अव्यर्थ प्रेरणा से भारत के सैकडों नवयुवक मृत्यु को सहर्ष चुनौती देकर वडी वडी कठिन विपत्तियो के मुख में भी वडी आन वान के साथ कूदे थे, और जिस प्रेरणा के वल से उन्होंने अपार दुःखों और लाँछना को पक्के सयमी की भाँति सहन किया था, उस भाव के प्लावन को क्या कोई विशेप व्यक्ति उपस्थित कर सकता है? या इसका स्थायित्व किसी व्यक्ति विशेप के मत, अथवा जीवन-मरण पर अवलम्वित है?

जव मैं निरा वच्चा था तभी से मेरे हृदय में स्वदेश के उद्धार करने का सङ्कल्प जागृत रहता था। यह सङ्कल्प मुझे किसी से प्राप्त नहीं हुआ। उस छोटी सी ही उम्र में किस ने मेरे रोम रोम में इस सङ्कल्प को भर दिया था? वचपन से ही मैं इस विषय की आलोचना अपने छोटे भाइयों से करता आता हूँ। उस समय तो स्वदेशी आन्दोलन भी उपस्थित न हुआ था। यह कुछ एक मेरे ही मन की दशा न थी। वयस्क होने पर जव मैंने और और लोगो से वात

चीत की तब मुझे पता लगा कि मेरे जैसे और भी बहुतेरे लोग देश में विद्यमान हैं। मुझे तो यह जचता है कि भगवान् अपने अभीष्ट को सिद्ध करने के लिए पहले ही से तैयारी करते आ रहे हैं।

हम ने जो आध्यात्मिक साधना ग्रहण की थी, एक शब्द में उसे आत्म-समर्पण योग कहा जा सकता है। भक्ति योग अथवा प्रेम साधन से इस का घनिष्ठ सम्बन्ध है। मैं भगवान् को प्यार करता हू, इतना प्यार करता हू कि उस के सिवा अन्य किसी वस्तु को अपना नहीं कह सकता। मैं जो कुछ करता हू, वास्तव मे वह मैं स्वय नहीं करता, मैं तो केवल निमित्त मात्र हू, भगवान् स्वय मेरे द्वारा उन कार्यों को सम्पन्न करते हैं। वेदान्त मे इस मत का पर्याप्त पोषण किया गया है। जगत् में शक्ति एक ही है, अतएव जो कुछ इस ससार में होता है सब उस शक्ति का ही खेल है। परन्तु जगत् को हम माया नहीं समझते वरन् उस भगवान् की लीला मानते हैं। हम ने निज जीवन मे, देश में तथा जगत में उसी एक शक्ति की लीला देखने तथा अनुभव करने की चेष्टा की थी।



दूसरा परिच्छेद

पूर्व परिचय

१९०६ १९०७ ईस्वी मे बगाल मे जो क्रान्ति की लहर चल रही थी वह बगाल तक ही सीमित न रही। कुछ बगाल के अनुकरण में और कुछ बगाल की प्रेरणा मे इस समय भारत मे कई स्थानो पर विप्लव केन्द्र स्थापित हो गये थे। इसी के फल स्वरूप काशी, दिल्ली और लाहौर में विप्लव केन्द्रो की सृष्टि हुई।

मैं दिल्ली बम केस के बाद से ही कहानी आरम्भ करूँगा। उस से पूर्व बगाल के बाहर क्रान्तिकारियों ने जो कार्य किये, जन-साधारण को उस का कुछ ज्ञान न था। दिल्ली षड्यन्त्र के मुकदमे में लाला हरदयाल और श्री रासबिहारी बसु के नाम विख्यात हुए। लाला हरदयाल उस समय अमेरिका में थे किन्तु रासबिहारी घोर सकट के समय में भी १९१५ तक भारत में ही रहे। वे बगाल के बाहर के क्रान्तिकारी दल के नेता थे। उन को साधारणत हम दादा या रासूदा बोलते थे।

दिल्ली षड्यन्त्र के मुकदमे के आरम्भ होने के पहले से ही रासबिहारी फरार हो चुके थे। उन को पकडने के लिए कई पुरस्कारों की घोषणा हो चुकी थी। प्रत्येक बडे रेलवे स्टेशन पर उन का फोटो टागा गया था, उन को पकडवाने का कितना पुरस्कार दिया जायगा इस का भी साथ ही उल्लेख कर दिया गया था। किन्तु, पूरा प्रयत्न करने पर भी सरकार उन को किसी तरह पकड न सकी।

कई स्थानों मे घूम कर अन्त मे रासबिहारी ने काशी में रहना स्थिर किया। वे काशी मे मेरे साथ प्राय एक वर्ष तक रहे उस समय उन के ससर्ग से मैंने जो आनन्द पाया था उसे मैं भूल नहीं सकता। इतने अरसे मे मैंने उन को शायद कभी भी दुखी नहीं देखा। हा, जिस दिन दिल्ली षड्यन्त्र के मुकदमे के फैसले के अनुसार चार व्यक्तियो को फासी का हुक्म हुआ उस दिन एकान्त में उन को अश्रुपात करते देखा था।

रासूदा जितने दिन काशी मे रहे उतने दिन भारतवर्ष के भिन्न भिन्न स्थानों के लोगो को उन से मिलते देखा था। राजपूताना पंजाब और दिल्ली से लेकर सुदूर पूर्व बगाल तक के लोग उन के पास आते थे। वे जब तक काशी में रहे तब तक युक्तप्रदेश तथा पजाब के भिन्न भिन्न स्थानों में विप्लव केन्द्रों की स्थापना मे लगे रहे। उसी का यह परिणाम हुआ कि एक ही वर्ष में हमारा दल पर्याप्त शक्तिशाली हो गया और उसी का यह फल था कि योरोपीय महायुद्ध जब प्रारम्भ हुआ तब हम खूब ज़ोर से काम कर सके थे।

सन १९१५ भारत मे चिरस्मरणीय रहेगा। इस साल विप्लव की जितनी बडी तैयारी अकारथ गई उतनी बडी तैयारी सन् ५७ के गदर के पश्चात्, पंजाब मे कूका-विद्रोह के सिवा और हुई कि नहीं इसमे सन्देह है। इस षड्यन्त्र कारी दल के गिरफ्तार हो जाने पर "भारत-रक्षा" कानून गढ़ा गया था। उस समय के होम मेम्बर क्रैडक साहब ने, भारतीय व्यवस्थापिका सभा में उक्त कानून का प्रस्ताव उपस्थित करते समय जो वक्तृता दी थी उस में कहा था —"We had

had anarchism for a long time in Bengal, but the situation in the Punjab was serious, in Bengal it was less so" उस समय सचमुच भारत की दशा बहुत ही नाजुक हो गई थी। हां, बङ्गाल के सम्बन्ध में क्रैडक साहब की अभिज्ञता उस समय बहुत ही कम थी। कुछ दिन के पश्चात् उक्त साहब ने स्वीकार किया था कि पंजाब के विप्लव कारियों के साथ बङ्गाल के विप्लवपन्थी दल के सम्बन्ध-सूत्र में सरकार की पहले जो धारणा थी उस में परिवर्तन होगया है।

उत्तर भारत के विप्लव सम्बन्धी कई मुकदमों में बहुतेरी बातें प्रकट हो चुकी हैं। बहुत लोग समझते हैं कि इन बातों में सचाई कम है। बहुतों ने मुझ से कहा भी था कि "पुलिस ने अपना दिमाग लड़ा कर झूठा मुकदमा बना कर खड़ा कर दिया है वास्तव में वैसा कुछ देश में किया ही नहीं गया है।" ऐसे लोगों की बातें सुनने से मैं दिल में जल भुन जाता था। सोचता था कि देश वासियों का आत्म शक्ति ज्ञान यहां तक लुप्त हो गया है, वे यह समझ नहीं सकते कि उन के स्वजातियों में ऐसा कुछ करने की सामर्थ्य है। किन्तु अन्दर की असहिष्णुता के कारण मन की बातें खुल कर न कह सकता था। इस से जलन और भी अधिक होती थी। ❀ 'कोमागाता मारू'

❀ इस स्थान में पुलिस के कार्यों के सम्बन्ध में दो चार और बातें कह देना उचित है। ऊपर जो कुछ कहा गया है उससे कोई सज्जन यह न समझ लें कि पुलिस जो राजनैतिक मुकदमे करती है वे सब-सम्पूर्णतया सत्य होते हैं। पुलिस मुकदमे बनाने के लिए कई मिथ्या कथायें

नामक जहाज के सिक्ख यात्रियों को कैनाडा की भूमि मे पैर न रखने देने के कारण उन के मन मे जो आग प्रज्वलित हुई थी उस की चिनगारिया जब चारो ओर उड रही थीं तब, भारत के एक प्रान्त मे बैठे हुए, हम लोग आशा की वेदना से चञ्चल होकर असहनशील की भाति ताक रहे थे। पजाब मे जो हमारे दल के लोग थे उन से कह दिया गया था कि 'कोमागाता मारू' के यात्री ज्यो ही देश मे आवें उन्हे फौरन दल में भरती कर लिया जाय।

किन्तु 'कोमागाता मारू' के यात्रियो के भारत की वसुन्धरा पर पैर रखते ही एक दुर्घटना होगई। हमारी आशा और भी सबल होने लगी। देखते देखते कैनाडा और कैलिफोर्निया से सिक्खो के दल के दल देश मे आने लगे। ये लोग भारत को आते समय रास्ते मे, स्थान स्थान पर उतर कर पुलिस और

धड़ती है और ऐसे ही कई बार सर्वथा निर्दोष व्यक्तियों को भी मुकदमों में फसा देती है। काशी षड्यन्त्र में जिन पर मुकदमा चलाया गया था और जिन को सजा दी गई थी उन में से कई सर्वथा निर्दोष थे। मैं ऐसे कई राजनैतिक मुकदमों के बारे में जानता हू जिन मे अभियुक्त व्यक्ति बिलकुल निर्दोष थे। लखनऊ राजनैतिक हत्या के मुकदमे मे श्रीयुत सुशीलचन्द्र लाहिड़ी को फासी हुई थी किन्तु बहुतों की सम्मति में वे वास्तविक अपराधी नहीं थे। लेखक फरवरी १९१५ में बगाल आर्डिनेंस के अनुसार गिरफ्तार किए गए थे और ६ महीने बाद उन के विरुद्ध राजद्रोह का मामला चलाया गया था किन्तु जिन घटनाओं पर यह मुकदमा निर्भर करता था उन से उन का कोई भी सम्बन्ध नहीं था।

फौज में नियुक्त सिक्खों के बीच विप्लवाग्नि भडका रहे थे। ये लोग बहुत दिन से भारत के बाहर परदेश में थे। इस कारण ये प्राय यह न जानते थे कि गुप्त रूप से षडयन्त्र किस प्रकार किया जाता है। यही कारण है कि ये लोग प्रत्येक जहाज और बन्दर मे गदर की आग फैलाते चले आ रहे थे। फल उस का यह हुआ कि भारत सरकार खूब चोकन्नी हो गई। जैसे जैसे सिक्खों के दल स्वदेश से आकर जहाज से उतरने लगे तैसे तेसे सरकार की ओर से उन की यथारीति अभ्यर्थना होने लगी। इस प्रकार एक दल के कोई तीन सौ यात्रियो को सीधा मुलतान जेल मे भेज दिया गया। इन में से बहुतो के पास काफी धन था इन्होंने अमरीका में लगातार कई वर्ष परिश्रम करके जो उपार्जन किया था उसे ये साथ लाये थे। उन के उस घोर परिश्रम से उपार्जित धन को सरकार ने जब्त कर लिया। बेचारों के घर वाले ताकते ही रह गये कि परदेश से दो पैसे आवेंगे तो महीने भर सुख से पेट भर भोजन कर लेंगे। इन में से एक सिक्ख के पास कोई तीस हजार रुपये थे।

बहुतेरे ऐसे थे जो अपनी सारी गाढी कमाई कैलिफोर्निया स्थित युगान्तर आश्रम के अर्पण कर आये थे। जितने दल सरकार की तीखी नजर से बच गये थे वे पजाब जाकर दलबद्ध होने लगे। सिक्खों के धर्ममन्दिर गुरुद्वारा कहे जाते हैं। इन में सिक्खों के पुरोहित रहते हैं। सिक्ख लोग इन्हे ग्रन्थी जी कहते हैं। प्रत्येक गुरुद्वारे मे एक ग्रन्थी जी रहता है। विप्लव पन्थी सिक्खों के सम्मिलन केन्द्र यही धर्ममन्दिर थे। मैं ऐसे ही एक गुरुद्वारे में बैठा था कि एक सिक्ख ने आकर खबर दी कि 'अमुक अमुक

व्यक्तियों को गुरुद्वारे मे जाते देख मैं उन से भेंट कर आया हूं।' थोड़ी ही देर में देखा कि उस जमात के मुख्य मुख्य व्यक्ति उस गुरुद्वारे में आ गये जहा कि मैं बैठा था। रुपये पैसे की चर्चा निकलते ही उन्होंने तुरन्त सोने की गोल गोल बडी बडी चकतिया मेरे आगे रख दीं, ये अमरीका मे प्रचलित सोने के सिक्के थे। हिसाब लगाने पर कोई हजार रुपये के हुए। प्रत्येक दल ने ऐसा बर्ताव किया था। गदर के कार्य में इन लोगों को जिस प्रकार दिल खोल कर अपनी गाढी कमाई का धन दान करते देखा है वैसा दृश्य बङ्गाल में देखने को नहीं मिला। इस में सन्देह नहीं कि ऐसा उत्साह और आन्तरिकता उन्हीं सिक्खों में थी जो 'कि अमरीका की यात्रा कर आये थे। इस के सिवा पजाब के अधिवासियो ने प्राय इन लोगो के साथ सहानुभूति प्रकट नहीं की। हा, पठान और सिक्ख सैनिकों के साथ इन लोगों का विशेष हेल मेल था। इस के सिवा सिक्ख जाति मे परस्पर एक दूसरे के प्रति सहानुभूति और समवेदना जनित एकता भारत की अन्यान्य जातियों की अपेक्षा बहुत अधिक है।

जो लोग अमरीका से लौट कर आये थे उन में अधिकतर ऐसे लोग थे जो कि वहा कुलीगीरी किया करते थे। इनमें से जिन के पास से तीस हजार रुपए जब्त कर लिए गये थे वे कैलिफोर्निया में खेती करके धनवान् हुए थे।

इन लोगों के बहुत से रिश्तेदार और भाई बन्द भारत की फौजों में नौकर थे। देश में आते ही इन लोगो ने सैनिकों के साथ साजिश करनी शुरू कर दी। उमी समय बङ्गाल के साथ पजाब का सम्बन्ध जुड गया। अनेक गुण होने पर भी इन लोगों में

सङ्गठन की वैसी योग्यता न थी जैसी कि बङ्गालवालों में थी। बङ्गाल के साथ उनका संयोग हो जाने पर बडे अच्छे ढग से काम होने लगा। उत्तर भारत की प्राय सभी छावनियों में हमारे दल के आदमी आने जाने लगे। उत्तर पश्चिम अञ्चल के बन्नू से लेकर दानापुर तक कोई भी छावनी अछूती न रक्खी गई। प्राय सभी रेजिमेंटो ने वचन दिया था कि पहले वे लोग कुछ भी न करेंगे, हाँ गदर शुरू हो जाने पर वे अवश्य ही विप्लवकर्ताओं से मिल जायेंगे। सिर्फ लाहौर और फीरोजपुर की रेजिमेंटों ने सब से पहले काम शुरू कर देना स्वीकार किया था। आरम्भ मे सरकार यह नहीं समझ सकी कि षड्यन्त्रकर्ता इतनी गहरी नींव देकर काम कर रहे हैं। यदि ऐसा न होता तो इतना अधिक काम हो ही नहीं सकता। पजाब के पुलिस विभाग के एक मुसलमान डिप्टी सुपरिन्टैन्डेन्ट ने अपने एक मुखबिर को इस दल में शामिल कर दिया था। अन्त में उस कृपालसिंह ने ही कृपा कर के सारी बातें प्रकट कर दीं।



तीसरा परिच्छेद

सिक्ख दल का परिचय

इस दल में कृपालसिंह किस प्रकार भर्ती हो गया और उसने किस प्रकार, कब, सारी बातें प्रकट कर दीं,—इसका उल्लेख यथास्थान किया जायगा। अभी तो इस सिक्ख दल का थोड़ा सा परिचय देने की चेष्टा करता हूं।

इस दल में कुछ कम मेम्बर न थे। उत्तर अमरीका और कैनाडा से भिन्न भिन्न दलों में कोई ६-६ हजार सिक्ख देश में वापिस आये थे। किन्तु सन १९१४ के Ingress Ordinance Act के अनुसार बहुतेरे लोग जेल में ठेल दिये गये तथा और भी बहुतेरे लोग नजरबन्द कर दिये गये जिस से वे अपना गाँव छोड़ कर कहीं आ जा न सकते थे। जो लोग नजरबन्द थे उन्हें विप्लव कार्य में सहायता देने का विशेष अवसर नहीं मिला। क्योंकि सूर्यास्त और सूर्योदय के दर्मियान इन्हें अपने घर पर मौजूद रहना पड़ता था। यह इस लिए कि क्या जाने पुलिस किस समय इनकी जाँच करने पहुच जाय। दिन निकल चुकने पर भी ये लोग अपने गाँव से बाहर न जा सकते थे। किसी दूसरे गाँव का कोई व्यक्ति भी इन से प्रकट रूप में मिल जुल न सकता था। पीछे से जब काम अच्छे सिलसिले से होने लगा तब उन में से जिन जिन को देश का काम करने की प्रबल इच्छा हुई वे पुलिस की नजर बचा कर खिसक गये। अर्थात् क्या

पुलिस, क्या उनके घर के लोग और क्या रिश्तेदार—किसी को उन की खबर न मिली थी।

जिस भाव को हृदय में लेकर ये दल भारत में आये थे, स्वदेश में पदार्पण करने के पश्चात् ही उन में से बहुतों का वह भाव बदल गया। अमरीका से लौटे हुए इन ६-७ हज़ार मनुष्यों में से कोई आधे लोग अपने घर-गृहस्थी के कामों में जा फँसे। किन्तु अवशिष्ट सिक्ख बड़े उत्साह के साथ 'विप्लव-कार्य में लगे हुए थे।

इन अमरीका से लौटे हुए लोगों में अधिकाश सिक्ख ही थे। ऐसे लोग इने गिने ही थे जो कि सिक्ख न थे। शायद २५-३० हों। वे प्राय सब वयस्क थे। बहुतों के स्त्री परिवार और बाल बच्चे सब कुछ थे। इन में से बहुतो की उम्र ४० वर्ष से ऊपर थी। कुछ लोग तो बुड्ढे थे। भाई निधानसिंह, भाई सोहनसिंह भाई कालसिंह भाई केहरसिंह,—इन में से किसी की उम्र ५० वर्ष से कम न थी।

दिल्ली-षड्यन्त्र के मुकदमे में जो लोग गिरफ्तार हुए थे। उन में से कई एक उतरती उम्र के थे। अमीरचन्द की उम्र ७० से भी ऊपर थी। अवधविहारी भी जवानी पार कर चुके थे।

बङ्गाल का विप्लवकारी दल ही ऐसा था जिसके प्राय सभी सदस्य छात्रश्रेणी के बालक और नवयुवक थे। इन में से अधिकाश लोगों को सासारिक अभिज्ञता एक प्रकार से थी ही नहीं। ज्यादहतर ऐसे थे जिनकी उम्र १६ से लेकर २०-२२ वर्ष से अधिक न होगी। बङ्गाल में प्राय यही देखा पड़ता है कि जो लोग ३० के पार हुए उन का सारा उत्साह, समग्र उद्योग ठण्डा

पड जाता है, उस समय वे किसी तरह अपनी घर गृहस्थी का काम चलाते के सिवा और किसी मसरफ़ के नहीं रह जाते। मालूम होता है कि बङ्गाल का जो कुछ आशा भरोसा है वह मानो स्कूल और कालेज के युवकों के तरुण मनों में ही आवद्ध है। किन्तु बङ्गाल में काम करने वालों की सांसारिक अभिज्ञता-स्वल्प रहने पर भी उनमें बहुतों के तरुणवयस्क होने पर भी, उनमें एक ऐसी एकाग्र साधना देखी है जो कि बङ्गाल के बाहर अन्यत्र देखने को नहीं मिली।

बङ्गालियों ने जब जिस काम में हाथ लगाया है तब उसे प्राणों की बाजी लगा कर किया है। इसी से देखता हूँ कि बौद्ध युग में बङ्गालियों ने जिस प्रकार बौद्ध धर्म को अपनी नस नस में प्रविष्ट कर लिया था वैसा और किसी प्रदेश के लोगों ने नहीं किया तथा अन्त मे जब अन्यान्य प्रदेश वासियों ने बौद्ध धर्म को बिलकुल छोड दिया था तब वे बङ्गालियों को कुछ कुछ अवज्ञा पूर्ण दृष्टि से देखने लग गये थे। क्योंकि बङ्गाल उस समय भी बौद्ध धर्म को पहले की भांति हृदय से चिपकाए हुए था। फिर अंगरेजी अमलदारी होने पर भी बङ्गालियों ने जिस प्रकार अपना सर्वस्व खोकर पाश्चात्य शिक्षा-दीक्षा, और आचार व्यवहार को अपना लिया था उस प्रकार और किसी भी प्रदेश ने नहीं अपनाया। इसे बङ्गाल का गुण समझिए या दोष, किन्तु बङ्गाली जब जिसे ग्रहण करते हैं उसे प्राणपण से अङ्गीकार करते हैं। इसी कारण वर्तमान युग में भी बङ्गालियों ने जब देश हित की ओर ध्यान दिया तब फिर वे दूसरी ओर दृष्टि नहीं टाल सके। न फिर उन्होंने शादी-ब्याह करके गृहस्थी चलाई और न

उन्हें द्रव्य उपार्जन करना भला लगा, उन्हें तो एक दम घर द्वार छोड कर बाहर निकल आना पडा।

इन युवकों में से बहुतों में मुझे एक अतीन्द्रिय भाव की प्रेरणा का आभास मिला है-ये लोग सिर्फ आडम्बर करने में ही मस्त नहीं बने रहे। इन लोगों ने देश सेवा व्रत को एक प्रकार से साधना का अङ्ग ही समझ कर ही ग्रहण किया था। इन लोगों के बीच एक इसी धारणा और भावना ने दृढ रूप से जड जमा ली थी 'कि हम निम कारण मनुष्य होंगे, हम किस प्रकार चरित्र-वान् होंगे।"

किन्तु मैंने उस भाव को दो तीन सिक्खों के सिवा और लोगों में नहीं देखा। युक्त प्रदेश के जिन विप्लवपन्थियो से मेरा हेल मेल रहा है उन में बङ्गाल के आदर्श की बात छेडने पर देखा है कि वे भी उसे प्राणपण से ग्रहण करने में समर्थ नहीं हुए, प्रत्युत उनके होंठों पर अविश्वास की मन्द मुसकान ही देख पडी है।

सिक्खो मे प्रचण्ड साहस और उत्साह था, इस के सिवा वे कष्ट भी खूब सह सकते थे। उन की विशाल गठी हुई देह, खूब चौडा सीना और सुसम्बद्ध कटिप्रदेश सभी की दृष्टि को आकर्षित करता था। उन के दाढी और मूछों से सुशोभित दृढता व्यञ्जक चेहरों को देख कर बहुतेरे उत्पीडकों का दिल दहल जाता था। उनकी चाल ढाल से एक विशेष भाव प्रकट होता था। साफ मालूम होता था कि मानो वे दोनों पैरों पर समान भार डाल कर चलते हैं किन्तु बिना दाढी-मूछ वाले कोमलाङ्ग सीधे सादे नम्रताशील बगाली युवकों की भाति इनका चरित्र उच्च आदर्श पर गठित न हुआ था। इस बात को मैं साधारण भाव से लिख रहा हू,

क्यों कि व्यक्तिगत रूप से कतिपय सिक्खों के सम्वन्ध में मेरी वहुत ही उच्च धारणा है। अपनी अन्दमान-काला पानी-की कथा का वर्णन करते समय में इस विषय की आलोचना करूंगा।

शिक्षित कहने से हमारे मन में साधारणतया जो धारणा होती है उस दृष्टि से कहना पड़ता है कि अमरीका से लौटे हुए दलों में कोई भी शिक्षित न था। भारत के अन्यान्य प्रदेश वाले घर की आधी रोटी पर सन्तुष्ट रह कर वाहर जाने का साहस नहीं करते किन्तु इन में से वहुतों ने इस टुकडे पर सब्र न करके सिर्फ रुपया पैदा करने के लिए ही पजाव को छोड कर विदेश यात्रा की थी। सिङ्गापुर, पिनाग, स्याम, मलाया प्रायद्वीप और चीन के अनेक स्थानों में इन की गति विधि आरम्भ हुई। उधर कैनाडा और उत्तर अमरीका के भी अनेक स्थानों मे ये लोग इसी उद्देश से जा पहुचे। सिंगापुर, पिनाग और हागकाग में ये लोग खास करके अगरेजो की फौजो और मिलटरी पुलिस मे भर्ती हो गये थे। स्याम, मलाया प्राय द्वीप और चीन के अनेक स्थानों मे वहुतेरे सिक्ख कुलीगीरी भी करते थे। कुछ लोग ठेकेदारी या ऐसा ही कुछ और स्वाधीन रोजगार करते थे। किन्तु कैनाडा और अमरीका में ये लोग प्रधानतया कुलीगिरी ही करते थे वहा इन का यही पेशा था। अमरीका के किसी किसी कारखाने में अमरीका वासियों की अपेक्षा इन्हीं की जियादह कदर थी। अमरीका वासियों की अपेक्षा ये अधिक काम करते थे इस लिए इन्हें उजरत भी खासी मिलती थी। इस का फल यह होता था कि अक्सर अमरीकन मजदूरों से इन का झगडा वखेडा हो जाता था। मैंने इन से सुना है, कि एक वार एक शहर मे यह मनोमालिन्य इतना वढ गया कि

एक प्रचण्ड विवाद का श्री गणेश हो गया। वस्ती भर में सिक्ख मजदूर एक ओर हुए और दूसरी ओर हुए उस शहर के तमाम अमरीकन गोरे मजदूर। खासी मार पीट हुई, खूब लाठी चली, किन्तु यह सब होने पर भी सरकार की ओर से सिक्खों पर कोई जियादती नहीं हुई। भारत मे यदि कहीं ऐसी घटना हो जाती तो यह मामला न जाने कैसा रङ्ग पकडता। अमरीका मे लौटे हुए ये सिक्ख लोग वैसे शिक्षित न होने पर भी अपनी मातृ भाषा में लिखित ग्रन्थ आदि प्राय सभी पढ सकते थे और अपने गाव के सिक्खों की शिक्षा दीक्षा आदि के सम्बन्ध में इन्हे अत्यन्त उत्साह था। ऐसी शिक्षा के प्रचारार्थ उन अमरीकावासी मजदूर-पेशा सिक्खों ने ही अमरिका से धन सग्रह करके कई वार दस दस पन्द्रह पन्द्रह हजार की रकमें पजाब को अर्पण की थीं। अमरीका की स्वाधीन आव हवा के बीच मे रहने से और खासी आमदनी कर सकने से उन में आत्म-सम्मान मर्य्यादा और आत्म विश्वास का परिमाण बहुत कुछ बढ गया था। इन मे से कई एकों ने अमरीका में रह कर भी अपने वेष और परिच्छद को नहीं छोडा। बहुतेरे तो अपने हाथ से रसोई बना कर भारतीय ढङ्ग पर ही आहार विहार किया करते थे। देश से जब पहले पहल ये लोग अमरीका पहुँचे तब शायद अङ्गरेजी में एक भी बात न कह सकते थे। किन्तु वहा पहुँच कर अजीब किस्म की टूटी फूटी अङ्गरेजी बोलना इन्हो ने सीख लिया। इन के मुँह से वह टूटी फूटी अङ्गरेजी सुनने में बडा मजा आता था। अमरीका में ऐसी ही अङ्गरेजी बोल कर ये अपनी बातें वहा वालो पर व्यक्त करते थे और उम्दा अङ्गरेजी न जानने से इन के किसी काम में रुकावट न

पढती थीं, और फिर इन्हो ने धन भी खासा कमाया था। किन्तु अमरीका-प्रवास के फल स्वरूप इन लोगो ने स्वदेश सम्पर्क को नहीं तोड दिया। करते तो थे ये अमरीका मे कुलीगिरी या मजदूरी लेकिन यह जानने के लिए सदा व्यग्र रहते थे कि हमारे देश मे कहा क्या हो रहा है ? बङ्गाल की उस समय नवजागरण की तरङ्ग ने जिस प्रकार भारत के अन्यान्य प्रदेशो मे एक भाव की हिलोर पैदा कर दी थी उसी प्रकार उस का हिलकोरा सुदूर अमरीका मे स्थित भारतीयो के हृदय में भी लगा था । जब भारत के गदर की चिनगारिया धीरे धीरे चारो ओर उड रहीं थीं तब अमरीका मे कुछ लोगों के जी ही जी म वे चिनगारिया जल रहीं थीं। इसी समय भाई कर्तारसिंह नामक एक तरुण युवा इनके साथ आकर सम्मिलित हुआ । ये उडीसा के रेवेनशा कालेज की प्रथम श्रेणी की पढाई समाप्त करके विशेष कारण से अमरीका चले गये थे। यद्यपि सिक्खों में ये सब से कम उम्र के थे फिर भी इनकी अधिनायकता मे मैंने कितने ही बडी उम्र के सिक्खो को भी काम करते देखा था। इन्होंने अपने जैसे विचार रखने वाले दो एक व्यक्तियों की सहायता मे एक सवादपत्र के निकालने का सङ्कल्प किया। इसी समय, पजाब के स्वनामख्यात लाला हरदयाल भारत में विप्लव करने की सारी आशायें छोड छाड कर अमरीकन सोशलिस्टो (साम्यवादियों) के साथ आत्मीयता स्थापित करने का यत्न कर रहे थे। कैर्तारसिह और उनके मित्र इस अवसर पर हरदयाल के पास ऐसे पत्र को प्रकाशित करने का प्रस्ताव लेकर उपस्थित हुए। स्वदेश प्रेमी हरदयाल तो ऐसे सुयोग की ताक में ही बैठे थे। अत एव उन्हो ने खुशी खुशी उस काम में हाथ लगा दिया। इस

से "गदर" नामक विख्यात समाचार पत्र का प्रकाशन होना आरम्भ हुआ। और धीरे धीरे इसी ने "गदर" पार्टी का सङ्गठन कर दिया। कैलिफोर्निया का युगान्तर आश्रम ही इसका केन्द्रस्थल था।

बीसवीं सदी के महाभारत के आरम्भ होने से पहले तक भारतीय विप्लव वादियों का दल समझ ही न सका था कि अङ्गरेजों के साथ जर्मनी का विरोध इतनी जल्दी उपस्थित हो जायगा। फलतः इन के विप्लव की तैयारी भी इस ढग से हो रही थी कि मानो १०–१५ वर्ष के अनन्तर वास्तविक गदर शुरु होगा। यही कारण है कि ये लोग महासमर छिड़ते समय क्रान्ति के लिए पूरे तौर पर तैयार न थे। इसके सिवा अब तक के विप्लवकारी दल के साथ भारत से बाहिरी देश के किसी भी क्रान्तिकारी दल का कहने लायक कोई सम्बन्ध ही न था। इसका फल यह हुआ कि अमरीका से क्रान्तिकारियों के जब दल के दल भारत में आने लगे तब भारत मे स्थित क्रान्तिकारी लोग उनके साथ दिल खोल कर ठीक समय पर सम्मिलित नहीं हो सके, यदि सम्मिलन हो जाता तो भारत का भाग्य आज और ही प्रकार का हो गया होता।

अमरीका प्रवासी विप्लवपन्थियों की समझ में नहीं आया था कि अँगरेजो के साथ जर्मनो का युद्ध शीघ्र ही छिड जायगा, इस कारण उन की तैयारी और ही ढँग पर हो रही थीं। वे समझते थे कि भारत से बाहर की किसी अन्य राजशक्ति की सहायता लेकर युद्ध की तैयारी करनी होगी और इसी सङ्कल्प को कार्य मे परिणत करने के लिए बहुत कुछ आयोजन हो रहा था कि यूरप मे रणचण्डी का नृत्य होने लगा। सारा सङ्कल्प एकदम

विफल होगया। अब इन्होंने निश्चय किया कि गदर पार्टी के दल के दल भारत में पहुँच कर भारतीय सैनिकों को अपने काबू में कर लें। बस, क्रान्ति का यही एक मात्र उपाय निश्चित हो गया। हजारहों सिक्ख, विदेश में पड़े हुए अपने बोरिये बँधने समेट समेट कर स्वदेश को रवाना होने लगे।

इधर भारत सरकार को इस पार्टी की बहुत सी बातों का पता लग चुका था, क्योंकि इस पार्टी के मेम्बर लोग अमरीका में खुले खजाने सभाओं मे, भारत मे गदर करने के सम्बन्ध में व्याख्यान दिया करते थे। "गदर" नामक पत्र भी प्रकाश्य रूप में मुद्रित होता था। सन् ५७ के महाविप्लव की १० वीं मई एक उत्सव मे परिणत की जाती थी। लाला हरदयाल के ऊपर अँगरेज सरकार की विशेष उग्र दृष्टि थी। कई बार उन की डायरी तक बड़ी सफाई से उड़ा ली गई। अन्त में जब उन को गिरफ्तार करने की सलाह हो रही थी तब एक अमरीकन ने उन्हें सावधान कर दिया। अतएव हरदयाल ने और अन्य भारतीयों ने अमरीका से हट जाने मे ही भलाई सोची।

विभिन्न स्थानों के जर्मन एलची (कान्सल) उस समय भारत में विप्लव मचा देने की इच्छा रखने वालों की अनेक प्रकार से सहायता करते थे। अमरीका प्रत्यागत दलों ने उन से मिलने-जुलने के अवसर को कभी खाली नहीं जाने दिया।

इस प्रकार कुछ व्यक्ति तो यूरप की ओर चलते हुए और जो रह गये वे भारत की ओर रवाना हुए। रास्ते में ये लोग जहाँ तहाँ अपना अभिप्राय प्रकट कर दिया करते थे। इस प्रकार का एक दल जापान के बन्दर मे पहुँचा। यहाँ पर पर-

मानन्द नामक एक छरहरे डील का युवा पुरुष इन लोगों में आ मिला। ये झासी के निवासी थे। अन्दमान मे इन्हें हम लोग छोटे परमानन्द कहते थे क्योंकि वडे परमानन्द थे डी० ए० वी० कालेज लाहौर के भूतपूर्व अध्यापक भाई परमानन्द जी। इन्हें भी लाहौर षड्यन्त्र के मामले में देश निकाले की सजा दी गई थी। पजाव मे सिक्खो के अभ्युत्थान के अवसर पर स्वदेश और स्वधर्म के लिए जब निडर देशभक्तगण मुसलमानो के अत्याचार के आगे वेधडक वलिदान हो रहे थे—सिर दे देते थे लकिन धर्म न देते थे—उस समय भाई परमानन्द के एक पूर्वपुरुप ने आत्म वलिदान की पराकाष्ठा दिखला दी थी। उस समय उन्हे मुसलमानों ने आरे से चीर कर मार डाला था। उसी समय से सिक्खों में यह खानदान "भाई" नाम से विख्यात हो गया। सिक्खो मे यह "भाई" सज्ञा वडी सम्मान सूचक है। इसलिए हम लोग सिक्खमात्र को उन के नाम के साथ "भाई" शब्द लगा कर वुलाया करते थे।

सिक्खो के एक वडे उत्साही नेता भाई भगवानसिह थे। इन के व्याख्यान सुन सुन कर कितने ही सिक्ख, अपना काम काज छोड, विप्लव कार्य में सहायता करने के लिए देश में लौट आये थे। ये लोग कुछ क्षणिक उत्तेजना मे आकर, सर्वस्व छोड छाड कर, इस विप्लव-धर्म में दीक्षित नही हुए थे, वरन् इन मे सचमुच देश सेवा की प्रेरणा जागृत थी। इस प्रकार से जो सिक्ख देश में लौट आये थे उन में वहुतों से मेरी वात चीत हुई थी। उस से मालूम हुआ कि वे सचमुच प्राणों की प्रत्येक तह में—दिल के हर पहलू में—पराधीनता की जलन का अनुभव करके विप्लव कार्य मे सम्मि

लित हुए थे। इन में से कोई तो पिनाँग की मिलिटरी पुलिस मे नियुक्त था, कोई हाँग काँग में पहरेदार था और कोई सौदागरी करता था। इस समय हाँग काँग में सिक्खों की एक रेजिमेंट थी। इस रेजिमेंट पर भी इन लोगों का आधिपत्य हो गया था।

भारत में प्रत्यागत दल के अनेक व्यक्ति ऐसे थे जो कि अँगरेजों की पलटनों में सैनिक पद पर नियुक्त थे। इन में से किसी की सर्विस ८ वर्ष की, किसी की १० वर्ष की और किसी किसी की ११ वर्ष की थी। इन मे कोई भी ऐसा सैनिक न था जिसे तीन वर्ष से कम की अभिज्ञता हो। क्योंकि प्रत्येक सैनिक को कम से कम तीन वर्ष तक नौकरी करने की शर्त करनी पड़ती है। इन में से बहुतेरों का काम मैशीनगन चलाना था और कुछ लोग तोपखाने में भी काम कर चुके थे।

भारत को लौटने के मार्ग में पुलिस विभाग के कर्मचारियों ने इन लोगों से पूछा था कि आखिर तुम लोग हिन्दुस्थान किस लिए जा रहे हो। तो इन मे से किसी ने कहा, विवाह करने जाता हूँ और किसी ने कहा कि घर छोड़े बहुत दिन हो गये, इस लिए देश को जा रहा हूँ। ऐसे ही ऐसे कारण बतला दिये थे। फिर अदालत में मुकदमे के वक्त जब न्यायकर्ता इन मे हिन्दुस्थान में आने का कारण पूछते तब भी ये लोग प्राय वैसे ही उत्तर देते थे जो कि ऊपर लिखे गये हैं। सिर्फ एक व्यक्ति ने दूसरे ढग का उत्तर दिया था। न्यायकर्ता ने अभियुक्त से पूछा—"तुम देश में किस लिए आये थे?" इस का उत्तर दिया गया कि 'यह हमारा स्वदेश जो है।" इन पजाबी ब्राह्मण का नाम जगतराम था। ये 'गदर' पत्रिका के सम्पादन विभाग मे काम करते थे।

अमरीका से आये हुए सिक्खों में उत्साह तो अदम्य था किन्तु काम करने की नीति उन्हे मालूम ही न थी। न इन का कोई केन्द्र था और न कोई शाखा ही। किसी किसी की अधीनता में २०-२५ मनुष्य रहते थे। उसे इन २०-२५ आदमियों का सरदार कहा जाता था। ये सरदार कभी एकत्र हो जाते थे और कभी कुछ दिनों तक इन की परस्पर भेंट ही न होती थी। असल बात यह है कि सम्मिलित रूप मे काम करने की एक प्रणाली का इन में अभाव था। इस का कारण यही था कि इन का कहीं केन्द्र न था। इस प्रकार देश मे बिलकुल अव्यवस्थित रूप से कितने लोग गड बड मचा रहे थे यह कौन जानता है। जो लोग मुलतान जेल मे कैद थे वे भी यही कहते थे कि अब शीघ्र ही बलवा होगा और इस से हम झटपट रिहाई पा जॉयगे। इस का फल यह हुआ कि ये भिन्न भिन्न जेलों मे बाँट दिये गये। समान धर्मी और एक ही भाव के भावुक बहुत लोगों के एक स्थान मे रहने से जो आनन्द प्राप्त होता है वह आनन्द भी इन से छिन गया।

इन सब दलो ने भारत में आते ही बङ्गाल के षड्यन्त्रकारी दल का पता लगाना आरम्भ कर दिया। किन्तु पहले से ही किसी के साथ जान पहचान न रहने के कारण पात्र अपात्र का विचार किये बिना ही ये लोग पजाब के विद्रोह की बातें कहने लगे। इस समय कलकत्ते की मामूली सड़कों पर भी मैंने सुना था कि पजाब मे बलवे की तैयारी हो रही है। "भारत रक्षा" कानून बनाते समय हार्डिंज साहिब ने इस बात का उल्लेख किया था।

इसी समय करतारसिंह ने आकर बङ्गाल के किसी सुपरिचित, लब्ध प्रतिष्ठ प्रकाश्य नेता से मुलाकात की। उन्हों ने करतारसिंह को उपदेश दिया कि तुम अपने सङ्कल्प और सुभीते के अनुसार काम करते जाओ, बङ्गाल तो ठीक समय पर तुम्हारी सहायता करेगा ही।

इस समय इन्हें थोडी बहुत हथियारो की जरूरत हुई। यद्यपि इस बलने का प्रधान अवलम्ब पंजाबी सैनिकों के दल थे, तथापि आत्मरक्षा करने के लिए यथासम्भव प्रत्येक कार्यकर्ता को सशस्त्र रखने की इच्छा से कुछ रिवालवर इत्यादि की आवश्यकता हुई। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए श्रीयुत जगतराम कुछ रुपये देकर काबुल की ओर भेजे गये और यहीं से कारागार की यन्त्रणाओ ने उन का पल्ला पकड लिया। किन्तु बेचारे जगतराम पेशावर मे ही पकड लिये गये और आगे चलकर अन्दमान मे मुझे उन के दर्शन हुए थे।

झाँसी वाले परमानन्द को भी इन लोगो ने इसी काम के लिए बङ्गाल भेजा था पर ये भी खाली हाथ लौट आये।

सिक्खों के नेताओं से भेंट करूँगा । उस समय नवम्बर महीना खतम होने को था। पच्छिम में ठण्ड का मौसिम था । उसी शीतकाल के प्रात काल लुधियाने मे गाडी पहुँचते ही देखा कि मेरे मित्र के परिचित एक सिक्ख युवक हम लोगो की प्रतीक्षा कर रहे है। मित्र ने इन से मेरा परिचय करा दिया । यही करतारसिंह थे । ये गाडी मे सवार होकर हमारे साथ जालधर की ओर रवाना हुए। रास्ते मे थोडी बहुत बातें हुई । उन से मालूम हुआ कि इस समय लुधियाने मे दो तीन सौ मनुष्य एकत्र हुए हैं। जुदा जुदा काम करने के लिए ये लोग विभिन्न दिशाओं मे भेजे जायेंगे। ये लोग गुरुद्वारे मे अध्ययन करने के बहाने एकत्र होते थे।

उस दिन की बात का मुझे आज खासा स्मरण है । गाडी के उस डिब्बे में हम कई आदमी एकत्र हुए थे, किन्तु सभी के मन का भाव कई तरह का था। हम तीनों व्यक्ति बीच बीच में एक आध बात कर लेते थे सही किन्तु हृदय में कितने भावों का आलोडन हो रहा था। मैं रास्ते भर में यही सोचता गया कि इस सिक्ख दल के आदमी न जाने किस ढङ्ग के होंगे इन की शिक्षा-दीक्षा कैसी है, यह तो सुन ही चुका था कि इन में बहुतेरों की उम्र ३० वर्ष की या इस से भी अधिक है, ये मुझे किस दृष्टि से देखेंगे (क्यो कि उस समय मैं कुल ?? वर्ष का था), वहाँ जाने पर मेरा इन पर कुछ असर भी पडेगा, इतने बडे उन्मत्त जनसघ को हम लोग किस प्रकार सुसयत करके अपना अभीष्ट साधन करेंगे,—ऐसे ऐसे सैंकडो प्रश्न रास्ते भर भीतर ही भीतर मुझे बेचैन करते रहे । साथ ही साथ

चौथा परिच्छेद

पंजाब यात्रा

इस बलवे की तैयारी के समय काशी में, बाहरी लोगो से मुलाकात करने के लिए खास खास मकान थे। पजाब से जो लोग मुलाकात करने आते थे वे पहले ऐसे ही खास मकान में पहुँचाये जाते थे। वहाँ से खबर मिलने पर दूर से आगन्तुक व्यक्ति को छिप कर पहचान लिया जाता था। तब,सन्देह न रहने पर, उस से भेंट की जाती थी। मैं उस दिन काशी में ही था। पजाबी दल का एक मनुष्य वहाँ के विप्लव की तैयारी का समाचार लेकर हमारे पास आया। जब उस के मुँह से सुना कि बलवे के लिए दो तीन हजार सिक्ख कमर कसे तैयार बैठे हैं तब हमारा अन्तरतम पुरुष आनन्द से थिरकने लगा। पजाब के कार्यकर्ताओ ने आगन्तुक व्यक्ति द्वारा कहला भेजा था कि रासबिहारी की हमे बहुत जरूरत है। दिल्ली षड्यन्त्र के फरार असामी प्रसिद्ध कर्मवीर रासबिहारी का नाम इस समय अमरीका तक मे विश्रुत हो चुका था। इन लोगो ने अमरीका मे ही इन का नाम सुना था।

कई कारणों से उस समय रासबिहारी पजाब न जा सके, इस लिए पहले वहाँ मेरा ही भेजा जाना तय पाया। जब मैं पजाब की दशा अपनी आँखो देख आऊ और सब को वहाँ का हाल बतलाऊँ तब आगे का कर्तव्य निर्द्धारित हो।

पहले ही निश्चित हो गया था कि जालधर शहर मे जाकर

इन बम गोलों के फटने से भारत में चारो ओर देश भक्तों के बीच जागृति सी देख पडती थी। सभी, कमसे कम बहुतेरे, लोग समझते थे कि बड़े भारी बलवे की तैयारी का यह ऊपरी लक्षण है और ऐसी घटनाओं से सब को ऐसे ऐसे दलों का सगठन करने की इच्छा होती थी। उल्लिखित सवाद को पढकर करतारसिंह बहुत ही प्रसन्न हुए। परस्पर नेत्रों मे बात चीत हो गई, एक दूसरे की आखों के कोनो से आनन्द का आभास प्रकट हुआ। इस प्रकार हम लोग जालधर स्टेशन पर पहुँचे। यहाँ करतारसिंह के कई छात्र मित्र प्रतीक्षा कर रहे थे। इन में जिन से जो कुछ कहना था वह कह सुन चुकने पर हम लोग रेल की पटरी को पार कर के पास के बगीचे में गये, वहाँ पर इस दल के कई नेता उपस्थित थे। इन को देखने से मुझे भरोसा हुआ कि इन लोगों के बीच मैं बिलकुल ही कम उम्र नहीं, क्योंकि इन मे ऐसा कोई भी न जँचा जिसकी उम्र मेरी अपेक्षा बहुत अधिक हो। उस दिन वहा पर करतारसिह, पृथ्वीसिह, अमरसिह और रामरक्खा के सिवा शायद एक व्यक्ति कोई और उपस्थित था करतारसिंह की उमर उस समय १९-२० वर्ष से अधिक न होगी। अमरसिंह और पृथ्वीसिंह दोनो ही राजपूत थे, किन्तु मुद्दत से पजाब मे ही रहते थे। इन की अवस्था २४-२५ वर्ष से ऊपर नहीं जँची। रामरक्खा ब्राह्मण थे। इन की उम्र भी इसी के लगभग होगी। ये लोग रासबिहारी से मिलने के लिए ठहरे हुए थे। मेरे पूर्व परिचित मित्र ने इन लोगों के साथ मेरा परिचय करा



श्रीयुत रामरक्खा

इन बम गोलों के फटने से भारत में चारो ओर देश भक्तो के बीच जागृति सी देख पडती थी। सभी, कमसे कम बहुतेरे, लोग समझते थे कि बडे भारी बलवे की तैयारी का यह ऊपरी लक्षण है और ऐसी घटनाओ से सब को ऐसे ऐसे दलो का सगठन करने की इच्छा होती थी। उल्लिखित सवाद को पढकर करतारसिंह बहुत ही प्रसन्न हुए। परस्पर नैनो मे बात चीत हो गई, एक दूसरे की आखों के कोनों से आनन्द का आभास प्रकट हुआ। इस प्रकार हम लोग जालधर स्टेशन पर पहुँचे। यहाँ करतारसिह के कई छात्र मित्र प्रतीक्षा कर रहे थे। इन में जिन से जो कुछ कहना था वह कह सुन चुकने पर हम लोग रेल की पटरी को पार कर के पास के बगीचे मे गये, वहाँ पर इस दल के कई नेता उपस्थित थे। इन को देखने से मुझे भरोसा हुआ कि इन लोगो के बीच में बिलकुल ही कम उम्र नहीं, क्योंकि इन मे ऐसा कोई भी न जचा जिसकी उम्र मेरी अपेक्षा बहुत अधिक हो। उस दिन वहा पर करतारसिंह, पृथ्वीसिह, अमरसिह और रामरक्खा के सिवा शायद एक व्यक्ति कोई और उपस्थित था करतारसिंह की उमर उस समय १९-२० वर्ष से अधिक न होगी। अमरसिंह और पृथ्वीसिह दोनों ही राजपूत थे, किन्तु मुद्दत से पजाब में ही रहते थे। इन की अवस्था २४-२५ वर्ष से उपर नहीं जँची। रामरक्खा ब्राह्मण थे। इन की उम्र भी इसी के लगभग होगी। ये लोग रासबिहारी से मिलने के लिए ठहरे हुए थे। मेरे पूर्व परिचित मित्र ने इन लोगो के साथ मेरा परिचय करा

दिया । मैंने पहले पहल इन में से किसी का भी नाम धाम आदि नहीं पूछा । पीछे से बात चीत के सिलसिले में मुझे सभी का नाम मालूम हो गया । हमारे दल में ऐसी जाँच पड़ताल सारा सन्देह की दृष्टि से देखी जाती थी और इस प्रकार नाम धाम पूछना तो मैं बिल्कुल अनावश्यक समझता था। मित्र ने मेरा परिचय यह कह कर कराया कि रासबिहारी तो एक खास काम के मारे आ नहीं सके, उन्हों ने अपने दहने हाथ स्वरूप इन्हें भेजा है । करतारसिंह ने कहा हमें तो रासबिहारी से ही काम है। तब मैंने उन्हें समझाया कि यहाँ आने से पहले वे यहाँ की दशा का पूरा पूरा हाल जान लेना चाहते हैं, इस के सिवा वे ऐसी दशा में हैं जिस से और भी कुछ समय तक इस ओर न आ सकेंगे । इसके पश्चात् मैंने इन लोगों से पजाब की हालत जानने के लिए पूछा—वे लोग कितने आदमी हैं, आपस मे किस प्रकार मिलते जुलते और मुलाकात करते हैं तथा उन का वास्तविक नेता कौन है, इत्यादि । मैंने कहा—"जो आप के असली नेता हों उन्हीं से मैं बात चीत और पहचान करना चाहता हूँ ।" अमर सिंह ने कहा—"सच पूछिए तो हम लोगों में वास्तविक नेता की खास कमी है और इसी लिए हमें रासबिहारी की जरूरत है। यहाँ पर हम जितने आदमी मौजूद हैं इन मे किसी को विशेष अभिज्ञता प्राप्त नहीं है, इस से हमारे काम का कोई खास सिलसिला नहीं बैठता । हम को बगाल से सहायता पाने की बहुत आवश्यकता है । बगाल में आप लोग बहुत दिन से काम कर रहे हैं इन कामों का आप लोगों को यथेष्ट अनुभव हो

गया है।" करतारसिंह ने भी इसे माना तो किन्तु अमरसिंह को लक्ष्य करके कहा—"देखो भाई, यों हिम्मत क्यों हारते हो काम के वक्त देख लेना कि तुम्हीं मे से कितने छिपे रुस्तम निकलेंगे।" उस दिन की बातो से मुझे साफ मालूम हो गया कि जिस महान व्रत में ये लोग दीक्षित हुए हैं उस के गुरुत्व का अनुभव इन की नस नस मे भिद गया है और अपने में शक्ति की कुछ कमी समझ कर बाहर एक सहारा ढूँढ रहे हैं किन्तु उस के साथ मैं यह भी समझ गया कि इन में यदि कोई सचमुच काम करने वाला है तो करतारसिंह है। मैंने इस में जैसा आत्म-विश्वास देखा वैसा आत्म विश्वास न रहने से किसी के द्वारा कोई बड़ा काम नहीं हो सकता। बहुतों में अहङ्कार का भाव रहने पर भी ऐसे आत्म विश्वास का भाव कम देखा जाता है। अहङ्कार और आत्म विश्वास अलग अलग दो चीजें हैं, अहङ्कार दूसरे पर चोट करता है किन्तु जो अहङ्कार दूसरे पर नोक झोक किये बिना ही अपने प्राणों मे शक्ति के अनुभव को जागृत करता है वही आत्म-विश्वास है।

जो हो, इन लोगों से मुझे पंजाब की बहुत कुछ हालत मालूम हो गई। उन मे से बहुतेरी बातों का वर्णन पहले किया जा चुका है। इन की बातो से ज्ञात हुआ कि इन के बलवे की तैयारी का मुख्य अवलम्बन पंजाब की सिक्ख फौजें हैं। करतारसिंह से ज्ञात हुआ कि भारत में अमरीका से सिक्खों का जो पहला दल आया था उसी में वे आये थे और सितम्बर महीने से इस काम की तैयारी कर रहे हैं इत्यादि।

अब करतारसिंह ने मुझ से पूछा—अस्त्र शस्त्र आदि देकर के बङ्गाल हमारी कहाँ तक सहायता कर सकता है? बंगाल में के हजार बन्दूकें हैं, इत्यादि।

मैंने कहा—आप क्या ख्याल करते हैं? बंगाल में कितने अस्त्र शस्त्र होंगे?

करतारसिंह—मैं तो समझता हूँ कि बंगाल में काफी हथियार मौजूद कर लिये गये हैं, क्योंकि बंगाल तो बहुत दिनों से चलने की तैयारी कर रहा है और हमारे दल के परमानन्द के एक बंगाली मित्र ने उन्हें पांच सौ रिवाल्वर का वचन दिया है। इस के लिए परमानन्द बंगाल गये हैं।

मैं—जिन्हों ने परमानन्द से यह बात कही है वे कोई फालतू आदमी जँचते हैं। क्यों कि बंगाल में कोई कहीं पांच सौ रिवालवर न दे सकेगा जिन्हो ने यह बात कही है उन्हों ने गप उडा दी है।

करतारसिंह—"तो फिर बंगाल हम को किस प्रकार की सहायता देगा? तो क्या वहाँ भी पंजाब के साथ ही साथ गदर होगा? बंगाल मे आप के अधीन काम करने वाले कितने हैं?" अन्य किसी समय और किसी भी व्यक्ति को ऐसे प्रश्न करने का हम लोग मौका ही न देते थे। और यदि कोई पूछ हो बैठता तो कह देते थे, "इन बातों को जान कर क्या कीजिएगा, समझ लीजिए कि कुछ भी तैयारी नहीं हुई है, तो भी इस दल मे संयुक्त होवोगे या नहीं? तुम को स्वयं आरम्भ से ही तैयारी करनी होगी, इस दशा मे भी क्या तुम इस दल में भर्ती होना चाहते हो? इत्यादि'। हाँ, बंगाल में यहीं

कहीं कोई कोई ऐसे भी थे जो वलवे की जगी तैयारी की बातें चढा चढा कर लोगो को सुनाते और इस तरह प्रलोभन देकर उन्हें दल मे भर्ती करते थे। जो हो, करतारसिंह ने जब ये प्रश्न किये तब उन को ठीक उत्तर न देकर टाल देना मुनासिब न मालूम हुआ। मैंने कहा—'देखिये, जिस प्रकार यहाँ आप को सैनिकों मे भर्ती होने का अवसर मिलता है उस प्रकार बंगाल में यदि हम लोगों को फौज मे भर्ती होने का सुभीता मिलता तो अब तक कभी का भीषण विप्लव मच गया होता। बंगाल के दल मे प्रधानतया युवक और छात्र श्रेणी के सदस्य हैं और इस दल मे हम लोग बडी ही सावधानी से, बहुत कुछ छान-बीन करके, ऐसे लोगों को सम्मिलित करते हैं जो कि हर घडी मरने को तैयार रहते हैं। इस लिए हमारे दल में अधिक आदमी नहीं हैं, शायद हजार दो हजार से अधिक न हो, किन्तु यह दृढ विश्वास है कि जिस दिन आम तौर पर बलवा हो जायगा उस दिन हजारों आदमी हमारे साथ आ मिलेंगे। यदि पंजाब में गदर हो जायगा तो यह भी निश्चित समझिए कि उस दिन बङ्गाल बैठा बैठा तमाशा न देखेगा और अङ्गरेजों को बंगाल के लिए इतनी उलझन मे पडना होगा कि सरकार अपनी कुल शक्ति एक पंजाब पर न लगा सकेगी'। मैंने यह भी कहा—"बंगाल इस समय भी सरकारी खजाने लूट सकता या पुलिस की बारकों पर छापा मारना इत्यादि काम कर सकता है किन्तु आगे क्या होगा? इस 'आगे क्या होगा' को सोच कर ही बङ्गाल ने अभी तक ऐसा कुछ नहीं किया।" मैंने इन लोगों को भली भाँति समझा दिया कि "हम लोगो से सलाह लिये बिना

अयानक कुछ कर न वैठना"। यह भी कह दिया 'खूब सावधानी से काम करना होगा जिस मे कि यह शक्ति व्यर्थ न हो जाय, सिर्फ हू हा करके फिजूल कामों मे शक्ति क्षीण न कर दी जाय।" मैंने इन्हे सलाह दी कि अधिकांश व्यक्तियों से कहो कि अपने अपने गाँव में जाकर रहे, केवल मुखियो का, और काम करने के लिए थोडे से आदमियों का समीप रहना ठीक होगा, और सब लोगों को कई टुकडियो मे बाँट कर प्रत्येक टुकडी पर एक एक अधिनायक तैनात कर दीजिए। ऐसा सगठन करने से जिस समय आवश्यकता होगी उस समय सब लोगों से अनायास ही काम लिया जा सकेगा। यदि इस प्रकार छोटी छोटी टुकडियाँ न बनाई जाँयगी तो गिरफ्तार हो जाने का अदेसा हर घडी रहेगा। फिर करतारसिह से कहा—' आप मे से कोई एक व्यक्ति मेरे साथ चले मैं उसे उस स्थान पर ले जाऊँगा जहाँ कि रासबिहारी है। रास विहारी के साथ अच्छी तरह सलाह करनी है।' यह बात इन्हे पसन्द आई। अब निश्चय हुआ कि लाहौर मे पृथ्वीसिह से दुबारा मुलाकात करके, उन को साथ ले, रासविहारी के पास भेंट करने को जाना ठीक होगा।

करतारसिह ने हमारे यहाँ से कुछ रिवाल्वर इत्यादि की सहायता माँगी। आत्म रक्षा करने और छोटे छोटे सरकारी खजाने लूटने के लिए कुछ अस्त्र शस्त्रो की जरूरत थी। अमरीका से ये लोग जब स्वदेश को लौटे तब अनेक स्थानों से थोडे बहुत रिवाल्वर इत्यादि ले आये थे। अगरेजो की प्रखर दृष्टि रहने पर भी ये रिवाल्वर देश में पहुँच गये थे। वालटी की तली मे लकडी या टीन का पटरा लगा कर उस के बीच मे छिपा कर रिवाल्वर

इत्यादि लाया जाता था किन्तु कुछ दिनों में रिवाल्वर लाने की यह तरकीब ज़ाहिर होगई। कभी कभी यह भी होता था कि भारत के बन्दरगाह में पहुँचने से ज़रा देर पहले ये हथियार खलासियों के जिम्मे कर मुसाफिर चले आते थे और फिर फ़ुरसत तथा मौक़ा देख कर उन के पास से उठा लिये जाते थे। इस रीति से इन लोगों के हाथ कुछ रिवाल्वर आ गये थे। किन्तु अभी हथियारों की ज़रूरत थी ही। मैं काशी से कुछ रिवाल्वर और गोलियाँ लाया था। ये सब करतारसिंह को सौंप कर मैंने कहा कि इस वक्त यही सामान पास में था सो लेता आया, पीछे से और भी ला दूँगा किन्तु यह भी जता दिया कि हम लोगों के पास अस्त्र शस्त्रों का कुछ अधिक संग्रह नहीं है, अतएव इस सम्बन्ध में अधिक आशा न कीजिएगा।

मैंने बमगोलों के सम्बन्ध में उन से कहा कि इस काम में बंगाली लोग सिद्ध हस्त हो गये हैं और बमगोलों की जिस कदर ज़रूरत होगी, बंगाल देगा। उस समय ये लोग भी एक प्रकार का बमगोला बनाते थे। पंजाब में सीसे की और पीतल की बनी एक तरह की दवातें मिलती थीं। ये दवातें ही पंजाबियों के बम का ऊपरी हिस्सा थीं। इन दवातों के मुँह में पेंच था, दवात का ढक्कन लगा देने से बहुत अच्छी तरह बन्द हो जाता था। और इस का मसाला वही था जो कि पटाखों का है, अर्थात् पुटास (क्लोरेट आफ्) और मोमछाल। हिन्दुस्तान की बनी काँच की एक तरह की छोटी शीशी बाजार में मिलती थी। इस में सलफ्यूरिक एसिड भर कर मुँह बन्द कर दिया जाता और इसे खोल में डाल दिया जाता था। यह मामूली धक्के से ही फट पड़ता था।

मालूम होता है कि अक्सर इस में मसाले के साथ शक्कर भी डाली जाती थी। शीशी के टूटने पर एसिड पुटास और शक्कर के सयोग से यह बमगोला फट पडता और दवात के टुकडे चारों ओर छितरा जाते थे। यह बम वैसा मारात्मक नहीं था, फेंके जाने पर अक्सर फटता ही न था, और जो फट भी पडता तो आदमी की जान लेने के लिए बहुत करके काफी न होता। मैंने इन्हे समझा दिया कि बङ्गाल का बमगोला बडा विकट होता है। करतारसिंह से कहा कि पजाब के विभिन्न स्थानों में हमारे कुछ बमगोले रक्खे हुए हैं, जरूरत हो तो दिये जा सकते हैं। जब वे आग्रह के साथ लेने को तैयार हुए तो मैंने पूछा कि अब आप से कहाँ मुलाकात होगी। उन्हों ने उत्तर दिया कि "हमारे ठहरने का कोई निश्चित स्थान नही है।" इस पर मैंने पूछा—"क्या आप का कोई केन्द्र नहीं है जहाँ पहुँचने से सब बातो का पता लग जाय?" उत्तर 'नकार' मे मिला। मालूम हुआ कि ये लोग अलग अलग काम से चले जाँयगे और काम हो जाने पर फिर एक निर्दिष्ट स्थान पर आ मिलेंगे। यदि किसी कारण से इस प्रकार एकत्र न मिल सकें तो गुरुद्वारे मे ढूँढने के सिवा पता लगाने का और कुछ उपाय नहीं। यह सुनने से मुझे बडा अचम्भा हुआ। मैंने समझा कि शायद मुझ सब बातें बतलाई नहीं जा रही हैं। इस कारण, अपनी रीति के अनुसार, मैंने विशेष पूछताछ नहीं की। इस के विषय में कुछ सलाह भी न दी। पीछे सम्बन्ध घनिष्ठ होने पर मालूम हुआ था कि सचमुच इन की यही दशा थी और तब उन का उपाय भी कर दिया था। उस बाग में, जहाँ बात चीत हो रही थी, पहुँचते ही मुझे जँच गया था कि जालधर शहर

में इन का कोई खास अड्डा नहीं है। जो लोग यहाँ उपस्थित थे वे सभी जालन्धर शहर के बाहर के थे और मिलने के लिए आये थे। यहाँ इन का ऐसा कोई स्थान न था जहाँ जाकर मैं आराम कर सकता। इस प्रकार कुछ सिलसिला न रहने पर भी, ऐसी ही गड़बड़ में थे उन रासबिहारी को बुलाना चाहते थे कि जिन्हें गिरफ्तार कराने के लिए उस समय ७५००) साढ़े सात हजार का इनाम बोला गया था। जो हो ये सब बातें सुन कर मैंने करतारसिंह से अगले दिन किसी स्थान में जाने के लिए कहा वे राजी हो गये। निश्चय हुआ कि मैं उन की प्रतीक्षा उसी स्टेशन पर आकर करूँगा, फिर उन को साथ ले जाऊँगा और सुरक्षित बम के गोले उन के सुपुर्द कर दूँगा।

घड़ी देखी, सब लोग अपना अपना काम करने को उठ खड़े हुए। उन की गाड़ी का समय हो गया था। मैं और मेरा मित्र दोनों एक होटल में गये। वहाँ मालूम हुआ कि मित्र जी मॉँस मछली कुछ भी नहीं खाते। इस लिए मुझे भी दाल और शाक सब्ज़ी से ही सन्तोष करना पड़ा। पजाब की तन्दूरी रोटियाँ और दाल बहुत बढ़िया होती है।

मैं भी पहले मॉँस मछली से परहेज करता था। नहीं कह सकता कि कितनी बार मॉँस-मछली खाना बिल्कुल छोड़ दिया और फिर परहेज को भी तोड़ डाला। इस से कुछ पहले की बात है,—मैं एक बार हरद्वार में आकर लक्सर जक्शन पर रासूदा की प्रतीक्षा कर रहा था। वे दिन को तीसरे पहर की गाड़ी से आने को थे। स्टेशन पर अच्छा रिफरेशमेंट-रूम था। मैं हाथ-मुँह और सिर धोकर रिफरेशमेंट-रूम में गया। वहाँ मैंने

रोटी और तरकारी माँगी । रोटियाँ तो वढिया पछाँही थीं—किन्तु वह क्या—माँस क्यों ले आया ! मुझे उस समय तक मालूम न था कि पजावी लोग गोश्त को तरकारी कहते हैं । क्या करता, वडे पसोपेश में पडा । लौटाता तो किस तरह और वे लोग ही इस का क्या मतलव समझते । सोच विचार कर मैंने खा लेने का ही निश्चय किया। दुवारा जब तीसरे पहर रासू दादा के साथ खाने को वैठा तव उन्हों ने भी गोश्त रोटी की फरमायश की । किन्तु तुरन्त ही मेरी ओर देख कर अर्द्धस्फुट स्वर मे कहा—ओह, तुम तो गोश्त खाओगे नहीं । यह कह कर हुक्म वदलने को थे कि मैंने रोक कर कह दिया कि अब आता है तो आने दो और फिर सवेरे की घटना का उल्लेख कर के कहा कि उस वक्त तो खा चुका हूँ, अव जो इस वक्त न खाऊँगा तो खाना पाखण्ड होगा । किन्तु रासू दादा ने कहा—"देखो, इस से मन में किसी तरह की ग्लानि न होने देना" । उस दिन से मैं फिर माँस खाने लग गया, परन्तु माँस खाने पर भी, तथा वम को हाथ से स्पर्श कर चुकने पर भी मैं खूँखार जन्तु नहीं हू ।

जो हो, तन्दूरी रोटियाँ और वढिया दाल खाकर जब मैं तृप्त हो गया तब शारीरिक स्वराज्य प्राप्त करके मैं तो करतारसिंह के लिए वम के गोले लाने को दूसरी ओर चला गया और मेरे मित्र महोदय लाहौर की ओर रवाना हुए । मैं गन्तव्य स्थान में पहुँच कर अपने अड्डे पर गया। यहाँ पर जो हमारा मनुष्य था उस से मैंने जालधर मे सिक्खों से भेंट होने आदि का कुछ जिक्र नहीं किया, सिर्फ यही कहा कि मुझे वम के गोलों

की जरूरत है, एक सिक्ख महोदय आवेंगे, वे उन्हे ले जायेंगे। सिक्ख नाम सुन कर वह तनिक झिझका और कहने लगा कि सावधान, सिक्खो से जरा सोच समझ कर हेलमेल करना, उन पर आज कल सरकार की बडी सख्त नजर है। इस समय उन के ससर्ग से अलग रहना ही भला है। मैने मन मे सोचा कि बडी आफत है, अब इस पर विश्वास करना ठीक नही। अब इस से कुछ वास्ता न रक्खा जाय। प्रकट रूप से उस की हाँ मे हाँ मिला कर मैं ठीक निर्दिष्ट समय पर स्टेशन गया। यथा समय गाडी तो आगई किन्तु करतारसिंह के दर्शन न हुए। तब दूसरी गाडी आने पर फिर उन को ढूँढा किन्तु फल एक ही सा रहा। सारे स्टेशन मे उन के लिए चक्कर काटे, आँखें फाड फाड कर कितने ही लोगों के चेहरो को देखा किन्तु किसी का चेहरा करतारसिंह जैसा न दीख पडा। लाचार हो कर डेरे पर लौट आया। मैं तो जानता ही न था कि करतारसिंह से कहाँ भेंट होगी, लेकिन मजा यह कि उन के दल का भी कोई आदमी यह बात न जान सकता था। बम के गोले जहाँ के तहाँ रह गये। मैं लाहौर को लौट गया। यहाँ पुराने मुलाकातियो से मिला जुला और इन से भी पजाब की दशा जानने की चेष्टा की। इस प्रकार अनेक स्थानो और अनेक उपायो से जो कुछ सग्रह किया था उस की अनेक बातें मैं आप से कह चुका। शाम को लाहौर के समीप एक प्रकाश्य स्थान में पृथ्वीसिंह मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे, उन से मैंने करतारसिंह की बात कही। वे भी उन का कुछ पता-ठिकाना न बतला सके। काशी जाने के सम्बन्ध मे उन्हों ने तीन चार दिन की मुहलत माँगी

निश्चय हुआ कि ५वीं दिसम्बर को ये पंजाब मेल द्वारा काशी पहुँचेगें। फिर उन्हे मैं रासविहारी के स्थान पर लेजाऊगा मैंने इस समय भी इन लोगो को ठीक पता न बताया था कि रासविहारी अमुक स्थान पर हैं।

लाहौर से रवाना होने के पहले मैंने अपने जिन पुराने जान पहचान वालों से मुलाकात और वातचीत की थी उन में से एक व्यक्ति के सम्बन्ध मे यहाँ कुछ कहना चाहता हूँ। शायद ये पजाबी न थे। ये पहले सयुक्तप्रात में ही कहीं निवास करते रहे होंगे। हाँ, अब पजाबी हो गये थे और इन के आचार व्यवहार मे पजाबीपन आगया था। इन का पूर्व परिचय सुने बिना जरा भी भ्रम न होता था कि ये पजाबी नहीं है। बङ्गाल से बाहर अनान्य प्रातो में बहुतेरे बङ्गाली रहने लगे हैं। किन्तु वे लोग इतनी जल्दी अपनी विशेषता को खो नहीं देते। तीन चार पुश्त अथवा इस से भी अधिक समय तक अन्य प्रात में रहने पर भी अधिकाश स्थलों मे बङ्गाली बङ्गाली बने रहते हैं, बल्कि उन स्थानो मे बङ्गालियो के मुहल्ले बस जाते हैं। किन्तु मैंने उत्तर भारत के लोगो को देखा है कि वे ऐसी दशा मे, अन्य प्रदेश मे रहते रहते बहुत जल्दी अपनी विशेषता गवाँ कर बिलकुल उस देश वालों मे खप जाते हैं। जो हो काशी लौटने के पहले इन की बातचीत से मुझे इन की थोडी सी सङ्कीर्णता का परिचय मिला। इस से मैं बहुत ही दुखित हुआ। बहुत बातचीत करने के बाद इन्हो ने दिल्ली-षड्यन्त्र वाले मुकदमे का उल्लेख करके कहा कि उक्त अवसर पर बङ्गाल से उन लोगों को कुछ भी आर्थिक सहायता नहीं मिली, यद्यपि उसी मुकदमे के असामी

वसन्तकुमार के लिए रुपये भी दिये गये और वैरिस्टर भी भेजा गया। कुछ कुछ इसी ढग का अभियोग उन्होंने बङ्गाल पर लगाया था। यद्यपि मुझे उस समय की कुछ बातें मालूम न थीं, क्योंकि दिल्ली षड्यन्त्र वाले मुकदमे के कुछ ही पहले मे इस दल मे भर्ती हुआ था तथापि जो कुछ मुझे मालूम था उस के अनुसार मैंने कहा कि हम लोगों ने दल की ओर से किसी को कुछ सहायता नहीं की, न तो रुपये ही दिए थे और न किसी वैरिस्टर को ही पैरवी के लिए भेजा था। वसन्त बाबू के ही किसी विशेष मित्र ने अपनी ओर से द्रव्य खर्च करके ऐसी सहायता की थी। पजाब के नये सिक्ख दल के सम्बन्ध में पूछताछ करने पर इन्होंने ऐसा उत्तर दिया मानो ये कुछ भी न जानते हों, और इन्हो ने जो कुछ कहा उस से स्पष्ट हो गया कि उक्त दल के सम्बन्ध मे ये सर्वथा अनभिज्ञ नहीं हैं। हाँ उसे मुझ पर प्रगट नहीं करना चाहते। मजा यह है कि इस दल की बातें इन से जानने का मुझे अधिकार था। इन की बात चीत के ढग से यही व्यक्त हुआ था कि सिक्खों का यह दल अपने विचारों के अनुसार स्वयं सब काम कर रहा है, यह किसी से कुछ प्रत्याशा नहीं रखता। मतलब यह है कि "बङ्गाल क्यो दाल भात में मूसलचन्द बनता है। " जब यह पूछा कि इस समय पजाब में रासबिहारी के आने से काम में कुछ सहूलियत हो सकती है, तो उत्तर मिला कि "हाँ, अगर वे चाहें तो आ सकते हैं। मैंने में सोचा कि "हाँ, अगर चाहें तो।" मैंने देखा कि र को भी इस ओर बुलाने का इन्हें आग्रह नहीं है यद्यपि ये इन से बहुत दिनों से परिचित हैं। सिक्ख दल के कुछ

बसन्तकुमार, के लिए रुपये भी दिये गये और वैरिस्टर भी भेजा गया। कुछ कुछ इसी ढग का अभियोग उन्होंने बङ्गाल पर लगाया था। यद्यपि मुझे उस समय की कुल बातें मालूम न थीं, क्योंकि दिल्ली षड्यन्त्र वाले मुकदमे के कुछ ही पहले मैं इस दल में भर्ती हुआ था तथापि जो कुछ मुझे मालूम था उस के अनुसार मैंने कहा कि हम लोगों ने दल की ओर से किसी की कुछ सहायता नहीं की, न तो रुपये ही दिए थे और न किसी वैरिस्टर को ही पैरवी के लिए भेजा था। वसन्त बाबू के ही किसी विशेष मित्र ने अपनी ओर से द्रव्य खर्च करके ऐसी सहायता की थी। पजाब के नये सिक्ख दल के सम्बन्ध में पूछताछ करने पर इन्होंने ऐसा उत्तर दिया मानो ये कुछ भी न जानते हों, और इन्हो ने जो कुछ कहा उस से स्पष्ट हो गया कि उक्त दल के सम्बन्ध मे ये सर्वथा अनभिज्ञ नहीं हैं। हाँ उसे मुझ पर प्रकट नही करना चाहते। मजा यह है कि इस दल की बातें इन से जानने का मुझे अधिकार था। इन की बात चीत के ढग से यही व्यक्त हुआ था कि सिक्खों का यह दल अपने विचारों के अनुसार स्वय सब काम कर रहा है, यह किसी से कुछ प्रत्याशा नहीं रखता। मतलब यह है कि "बङ्गाल क्यो दाल भात मे मूसलचन्द बनता है।" जब यह पूछा कि इस समय पजाब में रासबिहारी के आने से काम में कुछ सहूलियत हो सकती है, तो उत्तर मिला कि "हाँ, अगर वे चाहे तो आ सकते हैं। मैंने मन में सोचा कि "हाँ, अगर चाहें तो।" मैंने देखा कि रासबिहारी को भी इस ओर बुलाने का इन्हें आग्रह नहीं है यद्यपि ये स्वय उन से बहुत दिनों से परिचित हैं। सिक्ख दल के कुछ नेताओं से

परिचय करा देने के लिए उन से अनुरोध किया तो उत्तर मिला कि वैसे नेताओं से उन का खुद परिचय नहीं, लेकिन इस से पहले ये मुझ से कह चुके थे कि "लाहौर से मग्रह कर के उक्त नेताओं को हम हजार रुपया दे चुके हैं।" इस प्रकार ये जिस समय सिक्ख-दल की बहुत सी बातें मुझ से छिपाने का प्रयत्न कर रहे थे उस समय मैं मन ही मन मुस्कराता था।

'अह' को हम कितना ही दूर हटाने की चेष्टा क्यों न किया करें, वह प्रकट रूप से या बेजाने में न मालूम कितने प्रकार से इस तरह चिढा चुका है। जो हो इन की सकीर्णता देख कर कोई यह न समझ ले कि सभी पजाबी इसी ढग के थे। असल बात तो यह है कि जो लोग वास्तविक कार्यकर्ता थे वे अन्य प्रान्त वालों की अपेक्षा बङ्गालियो को कुछ अधिक स्नेह और श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। मुझे तो ऐसा स्मरण आता है कि अन्यान्य प्रान्त वालो की अपेक्षा यहाँ तक कि बहुतेरे पजाबियो की भी अपेक्षा सिक्ख मानो बङ्गालियो के प्रति विशेष रूप से आकृष्ट थे। मेरा तो खयाल है कि जो लोग कुछ करते धरते नही वही समालोचना करना पसन्द करते हैं। मेरे पूर्वोक्त मित्र महोदय हमारे कामों में अक्सर अनेक रूप से सहायता तो किया करते थे किन्तु ज्यादा तर वे हम लोगों से दूर ही रहते थे। इस कारण हम लोग भी उन से विशेष सम्बन्ध नहीं रखते थे, हाँ, इस समय पजाब की भीतरी दशा को अवगत करने के लिए सभी के पास जाना मैंने आवश्यक समझा था। विपत्ति में पडने पर भी ये किसी गुप्त बात को प्रकट न करेंगे-इतना विश्वास इन पर- जरूर था और इस विश्वास की सत्यता प्रमाणित हो चुकी है। क्योंकि एक बार ये

चक्कर में आगये थे।

जो हो, अब मैं यह सोच कर कि चलने की तैयारी का यह नया पर्व आरम्भ हो गया, रेल में बैठ कर काशी की ओर बढ़ा। रह रह कर सोचता था कि कब काशी पहुँचूँ और रामू दादा को कब सारा हाल सुनाऊं।

पंजाब की दशा देख कर मैंने समझ लिया कि यदि बहुत ही शीघ्र इस नवीन शक्ति को संयत और सुसम्बद्ध न किया जायगा तो सिक्ख लोग बेमौके कुछ ऐसा कर डालेंगे जिस से सारी शक्ति और उद्यम के छिन्न भिन्न हो जाने की सम्भावना है—उस समय किसे खबर थी कि इतनी सावधानी रखने पर भी टाँय टाँय फिस होगी, 'इस जगत् में व्यर्थ कुछ भी जाता है या नहीं इस प्रश्न पर यहाँ विचार नहीं करना है।—इस प्रकार सोचते सोचते मैंने रास्ते में ही निश्चय कर लिया था कि जितनी जल्दी हो सके दादा को इस ओर भेजना होगा और अपने प्रान्त में भी अब छावनियों में—फौजों में—काम आरम्भ करना होगा। आगे चल कर बतलाऊँगा कि हम लोगों ने अब तक इस ओर क्यों ध्यान नहीं दिया। मैंने मन में सङ्कल्प कर लिया कि पंजाब में तो दादा को भेजूंगा और मैं स्वयं बंगाल को जाऊँगा। बंगाल में जाकर काम करने की मुझे बहुत दिनों से प्रबल इच्छा थी इस विषय की बात चीत दादा से मैं पहले कई बार कर चुका था, किन्तु उन की सम्मति नहीं मिलती थी।

पंजाब की सीमा को लाँघ कर गाड़ी युक्त प्रदेश में पहुँची। शाम हो गई। मेरे कमरे में मुसाफिर अधिक न थे, शायद कुल तीन चार थे। उस समय दुनियाँ के पर्दे पर कोई जगह न

थी जहाँ की बीसवीं सदी के कुरुक्षेत्र की बात चीत न होती हो। मुसाफिरों मे परस्पर जान पहचान हो जाने पर तुरन्त यूरप के महासमर की चर्चा छिडी। मैंने अपने साथी एक मुसाफिर से पूछा कि आप के गाव से कैसे क्या रँगरूट भर्ती हो रहे हैं। उत्तर मिला कि फौज के लिए अब बहुत मुश्किल से जवान मिलते हैं हालाँ कि विनती चरौरी और इनाम इकराम की भी कमी नहीं है। लोगो से कह दिया जाता है कि तनख्वाह माकूल मिलेगी और एक महीने की तनख्वाह पेशगी दी जायगी। खुद मैजिस्ट्रेट और अन्यान्य अफसर देहात मे इस के लिए दौरा करने जाते हैं। जो लोग फौज के लिए इधर उधर से आदमी भर्ती करा देते हैं उन्हें खासा कमीशन दिया जाता है। किन्तु यह सब होने पर भी आदमी नहीं मिलते। जो लोग फौज मे भर्ती होने लायक हैं वे गाँव छोड कर दूसरे गाँव मे भाग जाते है। मैंने पूछा तो क्या आपकी तरफ फौज के लिए एक भी रँगरूट नहीं मिलता? उन्होंने उत्तर दिया कि जो लोग बिल्कुलही नासमझ हैं वे पहले तो लालच में आकर भर्ती होना मजूर कर लेते हैं किन्तु जब सैनिक का सच्चा स्वरूप प्रगट होता है तब वे नौकरी छोडने की चेष्टा करने पर भी नौकरी से अलग नहीं किये जाते। इस दशा में बहुतेरे मनुष्य छावनी से भाग खडे होते हैं, तब इस के लिए उन्हें पुलिस की साँसत भोगनी पडती है।

पजाब की दशा भी मैं ऐसी ही सुन चुका था। वहाँ तो रँगरूट मिलना और भी मुश्किल हो गया था।

इस समय मैंने एक बात पर विशेष रूप से ध्यान दिया क्या रेल, क्या सडक और क्या हाट बाजार सभी जगह

अशिक्षित जनता मे अङ्गरेजों के प्रति तीव्र विद्वेष फैलता जाता था। एक दिन काशी मे, बस्ती से बाहर, कुएँ की जगत पर बैठ कर एक युक्त प्रदेश वासी व्यक्ति के साथ हमारे ही किसी काम की आलोचना हो रही थी। पास ही एक किसान घास छील रहा था। थोड़ी देर में देखा कि वह और भी समीप आगया और घास छीलते छीलते मुस्करा कर पूछने लगा — "अङ्गरेजों का राज्य रहेगा भी या नहीं" हम लोगों ने पूछा— "तुम्हें क्या जँचता है?" उत्तर मिला—'बाबू, अब ये हिन्दुस्थान में नहीं ठहर सकते इनका वक्त हो चुका"। "बाबू जर्मन लोग कब तक आवेंगे?' तब हम लोगों ने उसे समझाया कि जर्मनों के आने से हमारा कुछ फायदा नहीं, किन्तु उस ने फिर कहा—"नहीं बाबू जी, अंगरेज लोग अब न्याय नहीं करते, अब इन का चला जाना ही भला है।" इस पर हम को जो कहना चाहिए था वही कहा था। यहाँ उस का उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं। मैंने देखा कि 'बाबू लोग' यदि ऐसे लोगों की बातें सुन कर हाँ में हाँ न मिलाते थे तो ये बाबुओं को ज़रा टेढ़ी नज़र से देखने लगते थे।



पांचवां परिच्छेद

काशी में पुलिस के साथ सम्बन्ध

काशी में पजाब मेल तीन बजे पहुँचा। मेरे ऊपर पुलिस की खास नजर रहती थी। सवेरे से लेकर ९-१० बजे तक पुलिस या तो मेरे घर के दरवाजे के सामने ही अथवा वहीं कहीं अगल बगल में बैठी रहती थी और घर से बाहर पैर रखते ही मेरी गति विधि पर नजर रखने के लिए वह परछाहीं की तरह मेरा पीछा करती थी। घर में रहने पर भी मुझ से मिलना जुलना लोगों के लिए सहज काम न था। क्योंकि पुलिस जिस के साथ मेरा हेल मेल देखती उस की भी निगरानी उसी तरह करने लगती जैसी कि मेरी करती थी। इस कारण, उन दिनों, मेरे जैसे लोगों के साथ मामूली ढग पर लोगों का मिलना-जुलना भी जुर्म समझा जाता था। ऐसा सख्त पहरा रहने पर भी मैं इस प्रकार के काम करता था। बङ्गाल से काशी विभाग में बम के गोले और रिवाल्वर इत्यादि ले आता और फिर वहाँ से पजाब के विभिन्न प्रदेशों मे इन चीजों को पहुँचाता था, सभी काम इस सख्त पहरे के बीच होते रहते थे। पुलिस की आँखों में धूल झोंकना हम लोगों के लिए साधारण सी बात थी। आगे की बातें लिखने से पहले यहाँ मैं कुछ लटके लिखता हूँ, जिन से मालूम होगा कि किस प्रकार हम लोग पुलिस के पहरेवाले को छकाते थे।

पुलिस की नजर से बचने के लिए हमारी सब से बढिया हिकमत थी, घर से निकलते समय होशियारी से किसी तरह पहरे वाले को धोखा देना। यदि घर से रवाना होते समय पहरेदार की नजर से न बच सके तो क्या किया कि उस बार न तो दल का कुछ काम किया और न दल के किसी व्यक्ति से ही भेंट की, उस समय या तो अपने किसी सहपाठी के घर चले गये या हाट बाजार में जाकर जरूरी सौदा सुलुफ में ऐसा चित लगा दिया कि घर वाले समझते कि "आज तो शचीन्द्र का ध्यान गृहस्थी के कामों की ओर बेतरह लगा हुआ है" अथवा कारमाइकेल लाईब्रेरी में जाकर मासिकपत्रों और समाचारपत्रों की सैर करके फिर जहाँ का तहाँ अपने घर आ गया। आखिरी हिकमत यह थी कि यदि गरमियों का मौसम हुई तो घर लौट थोडा सी मालिश की और जाह्नवी के पवित्र जल में देह तथा मन को शीतल करके पहरेवाले को सहज ही छुट्टी दे दी। सहज इसलिए कि किसी किसी दिन बेचारे को हमारा पीछा करते करते नाकों चने चबाने पडते थे। इन पहरेवालो मे से प्राय किसी के भी साथ मेरा व्यक्तिगत विरोध न था। आँख से आँख मिलते ही मैं मुस्करा देता था। कभी तिमजिले की खिडकी से झाँक कर मैंने देखना चाहा कि देखें पहरेदार किस ओर क्या कर रहा है, और ठीक इसी समय उस की भी नजर मुझ पर पड गई तब मैंने जगले को खोल दिया। हजरत नीची निगाह करके टहलते हुए, घर के सामने से, मुस्करा कर कुछ आगे बढ गये। ऐसा अक्सर होता ही रहता था। इन पहरेदारों को धोखा देने में भी मजा आता था और धोखा देने में विफल होजाने में भी हमी मजाक का मसाला हाथ लगता था। किन्तु किसी किसी दिन इस तेज निगाह

की बदौलत काम मे गडवड हो जाने से इन लोगों पर क्रोध भी कम न होता था। इन्हे हम लोग जब तब समझाया करते कि "भैया किसी तरह नौकरी सभाले रहो भला इस तरह दिन भर दरवाजे पर डटा रहना कहाँ की भलमनसी है। घर वाले और टोले मुहल्ले वाले भला क्या कहेंगे। सरकार समझती है कि हम लोग न जाने कौन सा खतरनाक काम कर रहे हैं, सो यह उस की गलती है। जो हो, तुम अपनी नौकरी करो किन्तु नाहक हम लोगों को इस तरह सताओ मत।" इन जासूसों में भी बहुतेरे भले आदमी थे। वे लोग हम से इतनी नम्रता और सभ्यता से बात चीत करते कि उन पर हमे तनिक सी भी कुढन न थी, यहाँ तक कि उन को देखने से सहानुभूति का भाव ही मन में आ जाता था। वे लोग भी अक्सर सिर्फ नौकरी के लिहाज से शाम सवेरे या दोपहर के वक्त चक्कर लगा कर या तो मेरे घर के पास ही किसी गली मे आराम से बैठे रहते या सडक पर किसी दूकान मे बैठ कर गप शप किया करते थे। वे सिर्फ एक बार इतना ही पता लगा लेते थे कि मैं काशी मे ही हूँ न। किन्तु जो हम लोगो को कहीं जाते देख लेते तो पीछा करने से भी बाज न आते थे। फिर कोई कोई तो इस तरह हमारे पीछे पडता मानो हम उस के जन्म जन्मान्तर के वैरी हैं। तब हम लोग भी इन्हे छकाये बिना न रहते। कभी कभी क्या करते कि यों ही चक्कर काट कर एक गली से दूसरी में जाकर एकाएक भीड में घुस जाते और फुर्ती से निकल कर न जाने किस ओर गायब हो जाते। यदि, खुफिया पुलिस का कोई दारोगा हम लोगों को इस प्रकार—बिना पिछलग्गू के—घूमते फिरते देख लेता तो उस दिन हम पर नजर रखने को जो सिपाही

तैनात होता उसे सख्त सुस्त का खासा मजा चाखना पड़ता।

लगातार जासूसों के साथ यह आँख-मिचौनी का सा खेल खेलते खेलते हम लोगों में यह खासियत पैदा हो गई थी कि लोगों को देखते ही भाँप लेते थे कि यह जासूस है। अब सभी बातें प्रकट हो गई हैं, इस लिए अब साफ मालूम हो गया है कि हम कभी पुलिस के चकमे में नहीं आये, सिर्फ हमारा पीछा ही करके पुलिस एक भी नये आदमी का पता लगाने में समर्थ नहीं हुई। हम पर जिस समय यक्ष का सा कड़ा पहरा रहता था उसी समय हम लोग बम के गोले और रिवाल्वर लेकर काशी के विभिन्न स्थानों में आते जाते रहे हैं और इन चीजों को बाहर से काशी में लाये भी और फिर वहाँ से बाहर भेज भी दिया। मैं एक दिन सवेरे घर जा रहा था। घर के पास आते ही एक दम भेदिया-विभाग के दारोगा के सामने जा पड़ा। दारोगा अकेला न था उस के साथ उस का एक अनुचर भी था। मुझ पर नजर पड़ते ही वह मुस्करा कर आगे बढ़ा और मेरे पास आ खड़ा हुआ। मैं भी उसी तरह हँस हँस कर उस से बात चीत करने लगा। "क्या मार्निंग वाक करने तशरीफ ले गये थे?" मैंने भी कहा—"जी हाँ जरा घूम घाम आया हूँ।" "यह क्या है" कह कर मेरे बुक पाकेट की एक छोटी सी किताब की ओर उस ने उँगली से इशारा किया। मैंने उसी दम किताब निकाल कर दारोगा को दे दी। उस में नैपोलियन की कुछ उक्तियाँ और ऐसे ही दो एक अन्य विख्यात पुरुषों के जीवन की कोई कोई विशेष घटना लिखी हुई थी। उस ने खूब देख भाल कर मुझे किताब लौटा दी

फिर मुस्करा कर हम लोग अपनी अपनी राह से लगे। उस दिन और उसी समय मेरे कोट के नीचे वाले पाकेट मे गनकाटन (इस कपास से बम चलाने की वत्ती का पलीता बनता है) और इसी क़िस्म के अन्यान्य भीषण पदार्थ भरे हुए थे।

दूर से नजर पडते ही हम लोग ताड लेते थे कि यह पुलिस का आदमी है। मामूली पहरेदारों को तो उनकी जूतियो से ही पहचान लिया जाता था। फिर ज्यादातर उन के सिर पर की टोपी, चलने का ढग और हाथ मे छडी लेने की रीति—अपनी विशेषता के कारण—हमारी दृष्टि को धोखे से बचा लेती थी। कभी कभी अपने साथियो के कारण ये लोग पहचान लिये जाते थे। सडक पर चलते समय हम लोगों को कुछ ऐसी आदत पड गई थी जा कि जेल से लौट आने पर भी बहुत दिन तक बनी रही। वह यह कि सडक पर चलते समय एकाएक किसी जगह ठहर कर किसी व्यक्ति से बात-चीत करने लगे और उसी अवसर पर आगे पीछे नजर डाल कर एक बार भली भाँति देख लिया कि कोई पीछा तो नहीं कर रहा है। सडक के मोड पर जाकर पीछे भेद भरी निगाह डालने की जो आदत मुझे पड गई थी उस के लिए अभी उस दिन लोगो ने खूब मजाक किया। अथवा कोई चीज मोल लेने के बहाने किसी दूकान पर ठहर कर या किसी और ढङ्ग से चलते चलते एक दम रुक कर आगे पीछे देखे बिना मैं रास्ता चलता ही न था। मैं इस बात का ख्याल हमेशा रखता था कि मेरी तनिक सी भी गफलत से समूचा दल तहस नहस हो सकता है। किन्तु चलते चलते ठहरे बिना कभी पीछे

मुड कर न देखता था। यदि एक ही चेहरे पर कई बार नजर पडती तो उस पर तुरन्त सन्देह हो जाता और अपने सन्देह को-जाँचने के लिए किसी सुनसान गली मे जा निकलता। उस समय या तो पीछा करने वाला पकड लिया जाता यानी विश्वास हो जाता कि यह जासूस है अथवा उसे लाचार होकर पीछा छोड देना पडता था। अपना पीछा करने वाले को जब इस तरह हम चगुल में फाँस लेते थे तब किसी तरह उसे धोखा देना ही हमारा पहला काम होता था और ऐसे मौके पर चक्मा देने का खास ढग था सुनसान रास्ते पर चलते चलते एकाएक किसी भीड भाड की जगह में जाकर गायब हो जाना। इस के सिवा घर से चलने के पहले ही मैं खूब चौकन्ना हो जाता था और जिस दिन खास काम होता ,उस दिन तो बडे तडके घर से चल देता था। जब लौट कर घर आता तो देखता कि मेरा पीछा करने के लिए तैनात किये गये पहरेदार जी घर को घेर हुए इस तरह बैठे हैं गोया मैं घर के भीतर ही हूँ।

पुलिस के साथ मेरा ऐसा ही सम्बन्ध था। ऐसी ही दशा मे तीन बजे दिन को मैं काशी आ पहुँचा। पुलिस की नजर बचा कर घर गया और फिर वहाँ से दादा के डेरे पर। रासनिहारी उस समय काशी मे ही थे। किन्तु पुलिस को उस समय स्वप्न मे भी हमारी गति विधि कुछ मालूम न थी।

दादा से सलाह करने पर निश्चय हुआ कि युक्त प्रान्त के भी सैनिकों के बीच बलवे के विचार फैला देना चाहिए और बङ्गाल को पजाब के विद्रोह की खबर बहुत जल्द दे देनी चाहिए। ५वीं दिसम्बर की बाट जोही जाने लगी, क्योंकि

पृथ्वीसिंह से बात चीत हो जाने पर बङ्गाल को मेरा जाना निश्चित किया गया था। इस बीच अब मैं इस ताक में लगा कि काशी की छावनी में—बारकों में—किस प्रकार मेरी रसाई हो। दो एक दिन के बाद अखबार में पढा कि अमरीका से लौटे हुए कुछ सिक्ख, ताँगे पर सवार हो, एक गाँव में जा रहे थे। सन्देह करके पुलिस उन्हें गिरफ्तार करने गई तो उन के पास से रिवालवर इत्यादि अस्त्र बरामद हुए। फिर पुलिस जब उन्हें गिरफ्तार करने को तैयार हुई तब सिक्खों ने गोली चलाई जिससे एक सिपाही बहुत घायल हो गया। बाद को मालूम हुआ कि ये किसी खजाने को लूटने गये थे। किन्तु इन की होशियारी की तारीफ करनी पडती है कि जिन पर नजर पडते ही पुलिस को शक होगया।

ध्यान देने की बात यह है कि इस मौके पर गाँव वालो ने पुलिस को सहायता दी थी। गाँव वालो ने समझा कि पुलिस मामूली उचक्को और चोरो को गिरफ्तार कर रही है। बस, इसी धोखे मे आकर उन्हो ने पुलिस को मदद दी थी। इस से कुछ दिन बाद की एक घटना का हाल सुनिए। उस समय बलवे की तैयारी का भण्डा फूट चुका था। सारे पंजाब मे धर पकड की धूम से विचित्र कोलाहल मचा हुआ था। भाई प्यारासिंह नामक एक सिक्ख युवक को गिरफ्तार करने की फिक्र मे पुलिस थी। एक दिन ऐसा हुआ कि पुलिस का एक घुड़सवार एक युवक के पीछे बेतहाशा घोडा दौडाये जा रहा था। इस दशा मे वह युवक ३ मील के लगभग दौडा। घोडे की दौड से बाजी मारने मे वह असमर्थ होने पर था कि उसी के

गाव वालो ने आकर उसका रास्ता रोक लिया । पल भर मे पुलिस के सवार ने आ कर बहुत दिनो से भागे हुए आसामी भाई प्यारासिंह को गिरफ्तार कर लिया । गाव वालो को जब मालूम हुआ कि उन्हों ने जिन्हें गिरफ्तार कराया है वे उन्हीं के गाँव के सुपरिचित और सभी के परमप्रिय भाई प्यारासिंह हैं तब उन के पछताने का अन्त न रहा । जो लोग कभी इन भाई प्यारासिंह से मिले हैं वे इन के चरित्र की मधुरता से अवश्य मुग्ध हुए हैं, और उन सभी को स्वीकार करना पड़ेगा कि इन का 'प्यारा' नाम सोलहो आने ठीक है । जैसा इन का स्वभाव नम्र था वैसे ही इन के चरित्र से एक शान्त, समाहित सयत तेज का आभास मिलता था । गाव वाले सचमुच इन के गुणो पर लट्टू थे और विधाता की मर्जी देखिए कि उन्हीं गुण-मुग्ध गाववालों ने मानो अपने हाथों अपने प्यारे को पुलिस के पजे में फँसा दिया ।

जो हो, पजाब मे गिरफ्तारियां होने की खबर पढ कर हम लोग किञ्चित् विचलित हुए, क्योंकि हम लोग हर दम यही सोचते रहते थे कि ऐसा बढिया मौका तनिक सी भूल से कहीं हाथ से न निकल जाय । इधर अपने दल के उपरियुक्त दो एक लडकों से हम ने अपने कर्तव्य की बातें कहीं । इस समय से हम लोगो ने और सब कामों से ध्यान हटा कर अपना सारा सामर्थ्य सैनिकों का मन परिवर्तन करने की चेष्टा करने में लगा दिया । मैं एक दिन अपने एक महाराष्ट्र मित्र के साथ फौज की बारकों की ओर गया । हम लोग सीधे बारको में नहीं गये, पहले छावनी स्टेशन पर पहुँचे । यह इस लिए किया कि यदि

कोई हमारा पीछा कर रहा हो तो, स्टेशन पर जाने से, उसे बारकों में जाने की हमारी इच्छा न मालूम हो। स्टेशन पर पहुँचने के बाद हम लोग रेल की पटरी के किनारे किनारे बारकों की ओर बढ़े। स्टेशन पर पहुँचने और वहा के लम्बे प्लेटफार्म को तय करने में साफ मालूम हो सकता था कि हमारा पीछा तो नहीं किया जा रहा है। और जब मैं रेल की पटरी के किनारे किनारे चलने लगता था तब तो कुछ छिप ही न सकता था। फौज के बारको में जाते आते समय किसी भी दिन हमारा पीछा नहीं किया गया। रेल की लाइन, फौज की बारक के पास से, ग्रैण्ड ट्रङ्क रोड को काटती हुई चली गई है। ग्रैण्ड ट्रङ्क रोड के मोड पर आकर हम ने देखा कि दो युवा सिक्ख,बारक से निकल कर, शायद बाजार की ओर जा रहे थे। हम को अपनी ओर आते देख कर वे लोग खड़े हो गये। मैंने इन लोगों से कितनी ही बातें पूछीं। कुछ प्रश्न ये हैं—आप कहाँ जा रहे हैं, आप की पलटन का क्या नाम है, आप का हवल्दार कौन है, इस समय पलटन मे कितने जवान हैं, इस से पहले आप लोग कहाँ थे, यहा से कहीं जल्दी बदली तो नहीं होने वाली है, गोरों की बारको में कितने सिपाही हैं। और यहाँ की छावनी मे आप को आये कितना समय हुआ है, इत्यादि। सभी प्रश्नो के उत्तर देकर उन्होंने मुस्करा कर पूछा—"ये बातें आप क्यों पूछते हैं? हम पर हमला तो न कीजिएगा?" तब हम लोग भी इस लिए खिलखिला कर हँस पड़े कि जिस में इस उच्च हास्य के अनन्तर इन लोगो के मन में हमारे किए हुए प्रश्नों के सम्बन्ध में कुछ खटका न रहे। वे लोग अपने रास्ते लगे और हम धीरे धीरे सड़क पर, बारको के पास

होकर जाने लगे। बारकों में जाने की हमें हिम्मत न हुई। इतने में देखा कि एक और सिक्ख सड़क की तरफ आ रहा है। उससे हवल्दार की बावत पूछा तो वह बारक के एक स्थान की ओर उंगली से इशारा करके और हम से वहीं जाने को कह कर चला गया। अब हमने सोचा कि शायद बारकों में बाहरी आदमियों के जाने आने की रोक टोक नहीं है। किन्तु फिर भी बारक में किसी से कुछ भी परिचय न होने के कारण उस दिन वहा जाने की हिम्मत न हुई। हिंदुस्तानी और अँगरेजी फौज की कुछ बातें मालूम करके हम लोग उस दिन घर की ओर लौट पडे। काशी में सिक्खों की पल्लटन देखने से मुझे उस दिन बहुत ही उत्साह हुआ क्योंकि पजाब में जा कर मैंने देख लिया था कि सिक्खों को बडी सरलता से उत्तेजित किया जा सकता है। इस के सिवा यह भी सोचा कि यदि यह पलटन यहा कुछ दिन तक बनी रहे तो पजाब से सिक्ख-नेताओ को यहा बुला कर सहज ही काम कर लिया जायगा। उस दिन मेरी एक यही कामना थी कि यह सिक्खों की टुकडी कुछ दिन तक और यहीं बनी रहे। इन दिनों कोई भी सेना की टुकडी एक स्थान पर बहुत दिन तक न रहने पाती थी। यह टुकडी भी थोडे ही समय मे, कितनी ही छाव-नियों की सैर कर आई थी और कुछ भरोसा न था कि न जाने किस दिन यहा से कूच करने का हुक्म हो जाय।

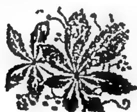
इधर दिसम्बर की ५वीं तारीख आ गई। यथा समय स्टेशन पर जा कर देखा कि पजाब मेल धक धक करता हुआ प्लेटफार्म पर आगया। मन में तरङ्ग उठी कि हमारे बलवे की तैयारी के साथ एञ्जिन का बहुत घना सम्पर्क है, इसी से उसका

कोई हमारा पीछा कर रहा हो तो, स्टेशन पर जाने से, उसे बारकों में जाने की हमारी इच्छा न मालूम हो। स्टेशन पर पहुँचने के बाद हम लोग रेल की पटरी के किनारे किनारे बारकों की ओर बढ़े। स्टेशन पर पहुँचने और वहां के लम्बे प्लेटफार्म को तय करने में साफ मालूम हो सकता था कि हमारा पीछा तो नहीं किया जा रहा है। और जब मैं रेल की पटरी के किनारे किनारे चलने लगता था तब तो कुछ छिप ही न सकता था। फौज के बारको में जाते आते समय किसी भी दिन हमारा पीछा नहीं किया गया। रेल की लाइन, फौज की बारक के पास से, ग्रैण्ड ट्रङ्क रोड को काटती हुई चली गई है। ग्रैण्ड ट्रङ्क रोड के मोड पर आकर हम ने देखा कि दो युवा सिक्ख,बारक से निकल कर, शायद बाजार की ओर जा रहे थे। हम को अपनी ओर आते देख कर वे लोग खडे हो गये। मैंने इन लोगों से कितनी ही बातें पूछीं। कुछ प्रश्न ये हैं—आप कहाँ जा रहे हैं, आप की पलटन का क्या नाम है, आप का हवल्दार कौन है, इस समय पलटन में कितने जवान हैं, इस से पहले आप लोग कहाँ थे, यहा से कहीं जल्दी बदली तो नहीं होने वाली है, गोरों की बारकों मे कितने सिपाही हैं। और यहाँ की छावनी मे आप को आये कितन समय हुआ है, इत्यादि। सभी प्रश्नो के उत्तर देकर उन्होंने मुस्करा कर पूछा—"ये बातें आप क्यो पूछते हैं? हम पर हमल तो न कीजिएगा?" तब हम लोग भी इस लिए खिलखिला कर हस पडे कि जिस से इस उच्च हास्य के अनन्तर इन लोगो के मन में हमारे किए हुए प्रश्नो के सम्बन्ध में कुछ खटका न रहे। वे लोग अपने रास्ते लगे और हम धीरे धीरे सडक पर, बारकों के पास

ीकर जाने लगे। बारकों में जाने की हमें हिम्मत न हुई। इतने
देखा कि एक और सिक्ख सड़क की तरफ आ रहा है। उससे
वल्दार की बाबत पूछा तो वह बारक के एक स्थान की ओर
गली से इशारा करके और हम से वहीं जाने को कह कर चला
या। अब हमने सोचा कि शायद बारकों में बाहरी आदमियों
जाने आने की रोक टोक नहीं है। किन्तु फिर भी बारक में
सी से कुछ भी परिचय न होने के कारण उस दिन वहां जाने
हिम्मत न हुई। हिंदुस्तानी और अँगरेजी फौज की कुछ बातें
लूम करके हम लोग उस दिन घर की ओर लौट पड़े। काशी
सिक्खों की पल्टन देखने से मुझे उस दिन बहुत ही उत्साह
था क्योंकि पंजाब में जा कर मैंने देख लिया था कि सिक्खों
बड़ी सरलता से उत्तेजित किया जा सकता है। इस के सिवा
ह भी सोचा कि यदि यह पल्टन यहां कुछ दिन तक बनी रहे
पंजाब से सिक्ख-नेताओं को यहां बुला कर सहज ही काम
र लिया जायगा। उस दिन मेरी एक यही कामना थी कि यह
क्खों की टुकड़ी कुछ दिन तक और यहीं बनी रहे। इन दिनों
ई भी सेना की टुकड़ी एक स्थान पर बहुत दिन तक न रहने
ती थी। यह टुकड़ी भी थोड़े ही समय में, कितनी ही छाव-
यों की सैर कर आई थी और कुछ भरोसा न था कि न जाने
स दिन यहां से कूच करने का हुक्म हो जाय।

इधर दिसम्बर की ५वीं तारीख आ गई। यथा समय
ान पर जा कर देखा कि पंजाब मेल धक धक करता हुआ
फार्म पर आगया। मन में तरङ्ग उठी कि हमारे चलने की
ारी के साथ एञ्जिन का बहुत घना सम्पर्क है, इसी से उसका

प्रचण्ड वेग देख कर मैंने सोचा कि मानो पजाब के बलवे का समाचार लेकर वह पागल की तरह दौडता आ रहा है। अब पजाब की चिनगारिया इसी दम बात की बात में इस प्रान्त में भी फैल जायँगी। किन्तु गाडी मे पृथ्वीसिंह के दर्शन न हुए। उनको बहुत ढूँढा किन्तु कहीं न देख पडे। तब पजाबियो पर बहुत क्रोध हुआ कि इन्हे वक्त की कदर मालूम नहीं। अब क्या किया जाए। उन लोगों को ढूढना सहज काम नहीं है। जाकर दादा को सब समाचार सुनाया। यह अनुमान किया गया कि किसी कारण से पृथ्वीसिंह आज यहा न पहुच सके होंगे, इस लिए मैं अगले दिन फिर स्टेशन पर गया किन्तु आज का जाना भी व्यर्थ हुआ। तीसरे दिन जाने पर भी भेंट न हुई।



छठा परिच्छेद

भाव और कर्म

दादा से सलाह करके अब मैं बङ्गाल को चला गया। वास्तव में देखा जाय तो दादा ही सारे उत्तर-भारतीय विप्लव पन्थ के नेता थे तथापि दल की पुरानी पद्धति के अनुसार, अपना कार्य कलाप और भी दो एक व्यक्तियों पर प्रकट करना पड़ता था। रासबिहारी पहले अन्यान्य सदस्यों की भाँति दल के साधारण कार्यकर्ता थे। धीरे धीरे अपनी अद्भुत कार्यकुशलता से, सब के

प्रचण्ड वेग देख कर मैंने सोचा कि मानो पजाब के बलवे का समाचार लेकर वह पागल की तरह दौडता आ रहा है। अब पंजाब की चिनगारियां इसी दम बात की बात में इस प्रान्त में भी फैल जायँगी। किन्तु गाडी में पृथ्वीसिंह के दर्शन न हुए। उनको बहुत ढूँढा किन्तु कहीं न देख पडे। तब पजाबियों पर बहुत क्रोध हुआ कि इन्हें वक्त की कदर मालूम नहीं। अब क्या किया जाए। उन लोगों को ढूंढना सहज काम नहीं है। जाकर दादा को सब समाचार सुनाया। यह अनुमान किया गया कि किसी कारण से पृथ्वीसिंह आज यहा न पहुच सके होंगे, इस लिए मैं अगले दिन फिर स्टेशन पर गया किन्तु आज का जाना भी व्यर्थ हुआ। तीसरे दिन जाने पर भी भेंट न हुई।



छठा परिच्छेद
भाव और कर्म

दादा से सलाह करके अब मैं बङ्गाल को चला गया। वास्तव में देखा जाय तो दादा ही सारे उत्तर भारतीय विप्लव पन्थ के नेता थे तथापि दल की पुरानी पद्धति के अनुसार, अपना कार्य कलाप और भी दो एक व्यक्तियों पर प्रकट करना पड़ता था। रासविहारी पहले अन्यान्य सदस्यों की भाँति दल के साधारण कार्यकर्ता थे। धीरे धीरे अपनी अद्भुत कार्यकुशलता से, सब के अलक्ष्य मे विचित्र सङ्गठन करके, एक दिन अकस्मात् बहुत से कामों का भार अपने ऊपर लेकर उन्होंने नेताओं के सम्मुख अपने को प्रकट किया। अस्तु, अब पञ्जाब का पर्व समाप्त करने के पहले बङ्गाल की चर्चा न छेड़ूँगा।

इस समय हमारे दल का विस्तार पूर्व बङ्गाल की अन्तिम सीमा से लेकर पञ्जाब मे प्रवेश करने की सूचना दे रहा था। अपने प्रधान नेता और पूर्वी बङ्गाल के कुछ नेताओं को पञ्जाब का नया समाचार सुनाने के लिए मैं बङ्गाल को भेजा गया था। किन्तु कलकत्ते में उस समय पूर्वी बङ्गाल का कोई भी व्यक्ति न मिला। अतएव मैंने यथास्थान कह दिया कि जितनी जल्दी हो सके, पूर्वी बङ्गाल का कोई व्यक्ति काशी आजाय, फिर केन्द्र के नेताओं के पास जाकर मैंने पञ्जाब का सारा समाचार विस्तार के साथ कह सुनाया। उन लोगों मे एक नए उत्साह की तरङ्ग मैंने

देखी सही किन्तु पूरे समाचार पर वे लोग उस समय विश्वास नहीं कर सके। बहुत रात तक बात चीत होती रही। यदि सचमुच बलवा हो जाय और यदि ऐसी दशा हो कि आमने सामने युद्ध न करके पीछे हटना पडे तो उस समय हम लोगों को कहाँ आश्रय मिलेगा, हम लोगो को रसद किस प्रकार मिलेगी और परस्पर सम्बन्ध-सूत्र किस प्रकार से रक्षित रहेगा,—इत्यादि अनेक विषयों पर जो बात चीत हुई थी उस का यहाँ पर उल्लेख करने से कुछ लाभ नही। उस समय भी सिक्खो के दल विदेश से भारत में चले आ रहे थे और उन में बहुतेरे लोग कलकत्ते मे कुछ दिन तक विश्राम करके पजाब को चले जाते थे। मैंने नेताओ से कहा कि इन विदेशो से आये हुए सिक्खो से सयोग स्थापित करने की विशेष रूप से चेष्टा कीजिए। इस बात पर भी विचार किया गया कि अब बहुत जल्द बम के गोले बहुत अधिक बनाने पडेंगे और उस के लिए अभी से तैयारी शुरू कर देनी चाहिए।

अन्त में हम लोगो के बहुत पुराने—किन्तु फिर भी 'नित-नए'—आत्म-समर्पण योग की चर्चा निकली। जहाँ एक बार इस की चर्चा निकल पडती तहाँ फिर जल्द समाप्ति न होती थी। मार्ग भले ही एक हो, और सब लोग एक ही आदर्श से प्रणोदित हों तो भी वही एक बात, एक ही भाव, भिन्न भिन्न व्यक्तियों में कितनी ही नई रीतियो से विकसित होने की चेष्टा करता है। इस लिए एक भाव के उपासक होकर भी, उसी एक मार्ग के पथिक होने पर भी हम लोगों के बीच परस्पर असख्य स्थानों मे मत भेद रहता था। गाने वाला तो एक ही है, किन्तु वही एक स्वर-लहरी पाँच श्रोताओ के

लेए कितने प्रकार की मूर्च्छना उत्पन्न नहीं कर देती ! मेल तं
काफी रहता है किन्तु बेमेल ही क्या कम रहता है ? जिस
भादर्श से प्रणोदित होकर हम लोग अपने व्यक्तिगत और समष्टिग
जीवन को नियन्त्रित कर रहे थे उस भावस्रोत की तरङ्ग यद्यपि
एक ही स्थान से आती थी तथापि उसने विभिन्न आधारों मे अपनी
विचित्रता की महिमा को स्थिर कर रक्खा था। हमारे आदर्श की
छोटी मोटी बातों के झगडों मे कितनी ही रातें बीत गई हैं, फि
भी उलझनें सुलझी नहीं हैं, एक व्यक्ति दूसरे को कुछ कुछ समझ
कर जब घर से बाहर निकल आता तब उषा की लालिमा अधखिले
फूल की तरह, पूर्व क्षितिज में दीख पडती थी। रास्ता चलते चलते
जब नींद से अलसाई हुई आँखो पर पलकें गिरने लगती तब मालूम
होता कि इतनी थकावट हुई है। रात बीतने से पहले ही इन
केन्द्रों से हट जाना पडता था और सवेरा होने पर अनेक काम
करते हुए भी रात की आलोचना का प्रसङ्ग दुबारा बातचीत करने के
लिए मानो प्रतिक्षण अवसर ढूँढता रहता था, और कभी कभी दिन
को काम काज करते समय न जाने कब वह योग की भावना
आकर हम पर प्रभाव जमा लेती थी। इस प्रकार भाव और कर्म
के मोहन आवेश में हमारा विचित्र जीवन व्यतीत और गठित
होता था।



सातवां परिच्छेद

फौज की बारकों में

काशी में वापिस आने पर दादा से ज्ञात हुआ कि काम मजे मे होता जा रहा है। उन्होने कहा—"आज ही दोपहर के बाद अमुक बाग मे एक सिपाही आने वाला है, तुम आज वहाँ जाना"। यह भी सुना कि वह पलटन काशी से बदल गई है और उस की जगह पर नई पलटन आई है। मैं दोपहर के बाद उसी बाग मे पहुँचा। उस बाग में मुझे एक मित्र ले गये थे। मैंने रास्ते मे उन से पूछा कि दल का परिचय इन लोगों के साथ किस प्रकार हुआ। मित्र ने बतलाया कि "ये लोग बाजार मे सौदा लेने आते थे, एक दिन छावनी की ओर जाते समय, रास्ते में इन्हे आते देखा। तब हम लोग भी इन से बात चीत करते हुए शहर की तरफ लौट पडे। रास्ते मे वर्तमान युद्ध सम्बन्धी बहुत सी बातें भी हुई। हिन्दू-मुसलमानो से सम्बद्ध बहुतेरी बातें भी हुई। हिन्दुओं की वर्तमान दुर्दशा और अध पात की चर्चा करते करते हम लोग बस्ती में आ पहुँचे। इस प्रकार पहले दिन जान पहचान हो चुकने पर उन का नाम धाम पूछ लिया गया और कहा गया कि आप से जरूरी काम है इसलिए किसी दिन तकलीफ कीजिएगा। बस, उस दिन इतनी ही बात चीत हुई। दूसरे दिन वे लोग फिर गङ्गा नहाने के लिए बस्ती में आये। उस दिन हम लोगों ने उन को अपनी भीतरी बातें कह सुनाई। बहुत कुछ बात चीत हो चुकने

पर उन्हें समझाया गया कि वर्तमान युद्ध मे, विदेश मे जाकर विधर्मियों के भले के लिए प्राण देने की अपेक्षा स्वदेश मे स्वधर्म के लिए प्राण देना हजार दर्जे अच्छा है। इस का उन पर बहुत अच्छा असर पड़ा। आसानी से काम बन गया। पलटन में जाकर अपने बेडे वालों से इस विषय की बात चीत करके वे आज मिलने को आने वाले हैं।" थोडी देर बाद ज्योंही थी कि देखा, एक मनुष्य हाथ मे सौदा लिये चला आरहा है। मित्र ने कहा, यही तो हैं। ये सिर से पैर तक सफेद कपडे पहने हुए थे, मानो भीतर की विशुद्धता बाहर भी प्रकट हो रही थी। इन से बात चीत करके मैं बहुत ही आनन्दित हुआ। हिन्दुओं की स्वभाव सिद्ध नम्रता मानो इन की देह में भिदी हुई थी। इन में एक उत्फुल्लता और उत्साह का भाव मैंने देखा, किन्तु उत्तेजना इन्हें छू तक नहीं गई थी। उस दिन इन के साथ सीधे बारक में जाकर और इन की चारपाई पर बैठ कर बहुत बात चीत हुई। हम लोग इन की चारपाई पर बैठ कर बातें करने लगे और ये हमारी खातिर के लिए समीप के बाजार से मिठाई मगाने का इन्तजाम करने लगे।

उस दिन अपने जीवन मे पहले पहल अँगरेजों की फौजी बारक में मैंने कदम रक्खा था। इससे पहले इन फौजी बारकों के कितने ही अस्फुट रहस्य मन मे न जाने कितनी बार कितनी ही सूरतों मे दीख पडे हैं। आज उसी फौजी बारक में बैठे रहने पर भी ऐसा जँचता था मानो सब रहस्य हमारे आस पास चक्कर काट रहे हैं। बीच बीच मे ऐसा प्रतीत होने लगा कि बहुत पुराना सुख स्वप्न मानो इस छावनी की बारक मे लिपटा हुआ है।

लम्बी बारक के बीच दुहरी कतार में सिलसिले से चारपाइयाँ

बिछी हुई हैं। कोई तो चारपाई पर बैठा इधर उधर की बातें मार रहा है, कोई पुस्तक पढ रहा है, और कोई किसी काम से वारक में आता जाता है। हम लोग परिचित सिपाहियो से उमङ्ग के साथ बात चीत कर रहे थे सही किन्तु मन मे एक ही साथ डर, अचरज और आनन्द की विचित्र गडबड मची हुई थी। हमारे लिए मिठाई मँगाने का जब ये इन्तजाम करने लगे तब पहले तो हम लोगों ने इन्हें रोका कि अजी मिठाई की क्या जरूरत है रहने भी दीजिए, किन्तु इन का आग्रह देख कर अन्त में चुप हो जाना पडा। इधर जब मिठाई के आने मे विलम्ब होने लगा तब बीच बीच मे खटका होने लगा कि जरूर कुछ न कुछ दाल मे काला है, शायद किसी अफसर को हमारी खबर देने के लिए कोई दौडाया गया है। थोडी ही देर मे आस पास के सिपाहियो ने हमारी चारपाइयों पर आकर हमारे साथ बात चीत छेड दी। बारको मे हम लोगों ने अपने को राजपूत क्षत्रिय बतलाया था। सिर्फ राजपूतों ही के लिए बनारस में एक स्कूल और कालिज था। वहाँ राजपूतों के सिवा और कोई पढने न पाता था और न वहाँ के बोर्डिङ्ग मे ही रहने पाता था। अपने पूर्व परिचित सिपाही की बात के अनुसार हम ने इन लोगों को बतलाया कि हम लोग उक्त राजपूत कालिज के छात्र हैं। सिपाहियो द्वारा नाम धाम पूछा जाने पर हम ने बडे तपाक से अमरसिंह और जगतसिंह प्रभृति नाम बतला दिये। किन्तु मन में धुकुड पुकुड होने लगी कि कहीं हमारा असली स्वरूप प्रकट न हो जाय। यह बतलाने की जरूरत ही नहीं कि वहाँ पर हम लोग बङ्गाली लिबास में न गये थे। हम में से एक के सिर पर तो साफा था और दूसरे के सिर पर थी टोपी। पहनावा भी संयुक्त प्रान्त-

वासियों जैसा था। मुझ से साफा बाँधते न बनता था, इस लिए मैं अक्सर टोपी से ही काम लेता था।

हमारे पूर्वपरिचित सैनिक ने एक हवलदार से परिचय कराने का वादा किया। इस हवलदार से ये हमारी चर्चा पहले ही कर चुके थे और हवलदार भी हमारे प्रस्ताव के पक्ष में हो गया था। थोड़ी देर बाद हवलदार से हमारा परिचय हुआ। इस का नाम दिल्लासिंह था। इस ने हम से कुछ झिझकते हुए बात चीत की और थोड़ी ही देर मे यह कह कर कहीं चल दिया कि एक काम करके आता हूँ। दिल्लासिंह उसी समय से हमें कुछ भला न जँचा और जब वह काम का बहाना करके खसक गया तब मैंने डरते डरते पूर्व परिचित सैनिक से धीरे से पूछा कि "दिल्लासिंह पर पूरा भरोसा किया जाय? कुछ खटका तो नहीं?" तब उक्त सैनिक ने उस की ओर से बेफिक्र रहने को कह कर उसे भला आदमी बतलाया। मैंने उस दिन भी यह बात किसी से नहीं छिपाई थी कि दिल्लासिंह मुझे भला आदमी नहीं जँचता। उस दिन दिल्लासिंह जब तक वहाँ लौट नहीं आया तब, तक हर घड़ी पल पर मैं अपने मित्र से कहता था कि 'क्यों जी, अब तक आया नहीं' कहाँ गया? और एक दूसरे की ओर देख देखकर हम दोनों परस्पर मुस्कराते थे। जो हो, हमारा सन्देह जाता रहा, उस दिन तो दिल्लासिंह दुबारा लौट आया। उस दिन मामूली बात चीत करते शाम होगई, फिर हम से एकान्त में बातें करने के लिए दिल्लासिंह उस पूर्व परिचित सिपाही को लेकर हमारे साथ साथ बारक के बाहर चला आया।

बिछी हुई हैं। कोई तो चारपाई पर बैठा इधर उधर की बातें मार रहा है, कोई पुस्तक पढ रहा है, और कोई किसी काम से बारक में आता जाता है। हम लोग परिचित सिपाहियों मे उमङ्ग के साथ बात चीत कर रहे थे सही किन्तु मन मे एक ही साथ डर, अचरज और आनन्द की विचित्र गडवड मची हुई थी। हमारे लिए मिठाई मँगाने का जब ये इन्तजाम करने लगे तब पहले तो हम लोगो ने इन्हें रोका कि अजी मिठाई की क्या जरूरत है रहने भी दीजिए, किन्तु इन का आग्रह देख कर अन्त में चुप हो जाना पडा। इधर जब मिठाई के आने में विलम्ब होने लगा तब बीच बीच में खटका होने लगा कि जरूर कुछ न कुछ दाल मे काला है, शायद किसी अफसर को हमारी खबर देने के लिए कोई दौडाया गया है। थोडी ही देर मे आस पास के सिपाहियो ने हमारी चारपाइयों पर आकर हमारे साथ बात चीत छेड दी। बारको मे हम लोगो ने अपने को राजपूत क्षत्रिय बतलाया था। सिर्फ राजपूतो ही के लिए बनारस में एक स्कूल और कालिज था। वहाँ राजपूतों के सिवा और कोई पढने न पाता था और न वहाँ के बोर्डिङ्ग मे ही रहने पाता था। अपने पूर्व परिचित सिपाही की बात के अनुसार हम ने इन लोगों को बतलाया कि हम लोग उक्त राजपूत कालिज के छात्र हैं। सिपाहियो द्वारा नाम धाम पूछा जाने पर हम ने बडे तपाक से अमरसिंह और जगतसिंह प्रभृति नाम बतला दिये। किन्तु मन में धुकुड पुकुड होने लगी कि कहीं हमारा असली स्वरूप प्रकट न हो जाय। यह बतलाने की जरूरत ही नहीं कि वहाँ पर हम लोग बङ्गाली लिबास में न गये थे। हम में से एक के सिर पर तो साफा था और दूसरे के सिर पर थी टोपी। पहनावा भी संयुक्त प्रान्त-

वासियों जैसा था। मुझ से साफा बाँधते न बनता था, इस लिए मैं अक्सर टोपी से ही काम लेता था।

हमारे पूर्वपरिचित सैनिक ने एक हवलदार से परिचय करा देने का वादा किया। इस हवलदार से ये हमारी चर्चा पहले ही कर चुके थे और हवलदार भी हमारे प्रस्ताव के पक्ष में हो गया था। थोडी देर बाद हवलदार से हमारा परिचय हुआ। उस का नाम दिल्लासिंह था। इस ने हम से कुछ झिझकते हुए बात चीत की और थोडी ही देर में यह कह कर कहीं चल दिया कि एक काम करके आता हूँ। दिल्लासिंह उसी समय से हमे कुछ भला न जँचा और जब वह काम का बहाना करके खसक गया तब मैंने डरते डरते पूर्व परिचित सैनिक से धीरे से पूछा कि "दिल्लासिंह पर पूरा भरोसा किया जाय? कुछ खटका तो नहीं?" तब उक्त सैनिक ने उस की ओर से बेफिक्र रहने को कह कर उसे भला आदमी बतलाया। मैंने उस दिन भी यह बात किसी से नहीं छिपाई थी कि दिल्लासिंह मुझे भला आदमी नहीं जँचता। उस दिन दिल्लासिंह जब तक वहाँ लौट नहीं आया तब, तक हर घडी पल पर मैं अपने मित्र से कहता था कि 'क्यो जी, अब तक आया नहीं, कहाँ गया? और एक दूसरे की ओर देख देखकर हम दोनों परस्पर मुस्कराते थे। जो हो, हमारा सन्देह जाता रहा, उस, दिन तो दिल्लासिंह दुबारा लौट आया। उस दिन मामूली बात चीत करते शाम होगई, फिर हम से एकान्त में बातें करने के लिए दिल्लासिंह उस पूर्व परिचित सिपाही को लेकर हमारे साथ साथ बारक के बाहर चला आया।

दिल्लासिंह ने हमारे प्रस्ताव को मान लिया और कहा कि हम बारक के कुछ अन्य सिपाहियों से भी बात चीत कर रक्खेंगे। दिल्लासिह के लौट जाने पर भी पूर्व परिचित सैनिक महोदय और भी थोडी देर तक हमारे पास बने रहे। अब दिल्ला सिंह के ऊपर हमारे शक करने पर इन्हों ने हम से फिर उस की ओर से बेखटके रहने को कहा। तब यह सोच कर मन में आनन्द हुआ कि चलो एक हवलदार तो दल में आगया। इस रीति से इस फौजी बारक में हमारा आवागमन आरम्भ हुआ और एक आध महीने के भीतर हम यहा कम से कम दस बारह बार आये-गये। इन सिपाहियो में से कुछ लोग शहर में हमारे डेरे पर भी आये थे और तब, हम लोगो ने भी इन्हें हर मर्तबा रसगुल्ला आदि कई प्रकार की बङ्गाली मिठाई खिला कर खुश किया था।

मालूम होता है कि समूचे भारत में ऐसा एक भी शहर न था जहा स्वदेशी आन्दोलन और बम के गोले के दल की बात किसी को मालूम न हो, हम लोगों ने इन सिपाहियों को अपने घर बुला कर बम के गोले, रिवालवर और मोजर पिस्टल आदि के दर्शन करा कर विश्वास करा दिया कि वास्तव में हम लोग भी उल्लिखित दल के सदस्य हैं। इस प्रकार कुछ दिनों तक आवाजाही होने पर इनको बतलाया गया कि पजाब की फौज में भी बलवे की तैयारी जोरों से हो रही है। हम लोग बखूबी जानते थे कि इन लोगों को भेद की सारी बातें सुना देने से क्या अनर्थ हो सकता है, क्योंकि इन लोगों के जरिए यदि सरकारी पक्ष को हमारी गदर की तैयारी का तनिक भी पता

मिल जाता तो पजाब का मत्र किया कराया मिट्टी में मिल जाता। किन्तु इनसे दुराव रखने में भी तो सुभीता न था, जब जब इनसे कहा गया कि "यदि हमारी बातों पर विश्वास न हो तो तुम अपने किसी आदमी को कुछ दिनो के लिए पजाब भेज दो, हम उन रेजिमेंटो से इसकी जान पहचान करा देंगे जिन्होंने कि प्रस्ताव को मान लिया है" तब हमारी बात पर इन्हें बहुत कुछ विश्वास हो गया। इस प्रकार धीरे धीरे तीन चार हवलदारों और सिपाहियों से हमारा परिचय हुआ।

हम लोग ज्यादातर शाम को या अँधेरा हो जाने पर बारकों मे जाते थे किन्तु दो एक बार दिन को दोपहर के वक्त भी जाना पड़ा है। इसी प्रकार एक दिन हम दो व्यक्ति बारक के समीप घने पेड़ो की छाह में बाट जोह रहे थे और हमारे बीच का एक व्यक्ति बारक में दो एक सिपाहियों को बुलाने गया था। देर तक राह देखने पर भी जब हमारा साथी नहीं लौटा तब हम लोग दुचित्ते होगये और डर लगने लगा कि कहीं कोई विपत्ति तो नहीं होगई। तब तो फिर यहा इस प्रकार, प्रतीक्षा करना भी युक्तिसङ्गत नहीं। किन्तु अपने साथी को ही किस प्रकार छोड़ कर चल दें,—ऐसी ऐसी बहुतेरी बातों पर हम सोच विचार करने लगे। डर तो हम लोगो को खूब लगता था किन्तु डर के मारे हम लोगों के हाथ पैर नहीं फूल गये, हमारा तो विश्वास है कि विषाद की तनिक सी भी कालिमा हमारे चेहरे पर नहीं आने पाई। और हमीं बारक में कितनी ही बार आये गये हैं, किन्तु खटके ने एक भी बार साथ नहीं छोड़ा, फिर भी हम प्रत्येक बार साफ निर्विघ्न

लौट आये। लौटने पर सोचते कि चलो, आज का दिन तो निर्विघ्न व्यतीत हुआ, किन्तु फिर भी कई वार बारकों में आना जाना पडा। जो हो, देर तक बाट जोहने पर भी जब मित्र महोदय न लौटे तब सोचा कि क्या सचमुच आफत ने घेर लिया ! फिर सोचा कि हम लोग बङ्गाली हैं, हाथ में टोपी और साफा है, बारक के पास ही पेड की छाह में हम भले आदमी के लडके बैठे हैं, इन घने पेडो की कतार के पास से ही ग्रैण्ड ट्रङ्क रोड गया है, जो कोई हाकिम हुक्काम हमें यहा पर इस दशा मे बैठा हुआ देख ले तो क्या समझेगा। हम ऐसी ही उधेडबुन मे थे कि मित्र महोदय को दो सिपाहियो के साथ अपनी ओर आते देखा। अत हमारे सिर से बडा भारी बोझा सा उतर गया। इस के पश्चात् इस बारक के पास दो एक बार सवेरे के समय भी आया हू, उस समय सिपाही लोग परेड पर कवायद करते थे। अपने ही परिचित एक हवलदार को सेना परिचालन कार्य्य करते देख ऐसा लगा कि रेजिमेंट मानो हमारी ही है, हमारे उद्देश्य की सफलता के लिए ही मानो यह सारी तैयारी की जा रही है। सामने से दो एक अँगरेज अफसर घोडे पर बैठे हुए निकल गये, किन्तु किसी ने हम लोगा की ओर ध्यान नहीं दिया। उस समय तो किसी के मन मे रत्ती भर भी सन्देह न था।

एक दिन की बात का मुझे खूब स्मरण है। उस समय पजाब का दुबारा चक्कर लग चुका था। बलवे की तैयारी पूरी होने की थी। एक दिन उन्हीं घने पेडों के नीचे बैठ कर, गोरों की फौजी बारक के बिलकुल ही समीप, अगरेज़ों के ही राज्य

को उलट देने के लिए कैसा भीषण षड्यन्त्र किया गया था। उस दिन कोई तीन हवलदार और नायब हवलदार तथा कुछ सिपाही, शाम होने पर, उन्हीं पेड़ों के नीचे एकत्र हुए। हम लोग भी तीन व्यक्ति थे। इन पेड़ो की क़तार के एक ओर रेल की पटरी है और दूसरी ओर है ग्रैण्ड ट्रङ्क रोड। इसी ग्रैण्ड ट्रङ्क रोड की बगल में थोड़ा सा मैदान छोड़ कर सेना की बारकें हैं कुछ सिपाही सड़क के किनारे पेड़ों की ओट में इस लिए बैठे हुए थे कि यदि किसी को उस ओर आते देखें अथवा ऐसा ही कुछ और खटका हो तो उसी दम हम लोगों को सावधान कर दें। हम लोग भी यथासम्भव वृक्षों की ओट में बैठ कर आसन्न विद्रोह का दिन, समय और अन्यान्य छोटी मोटी बातों पर विचार कर रहे थे। बीच बीच में ये लोग शङ्कित चित्त से इधर उधर देख लेते थे। उस दिन मानो कई युगों की सञ्चित रोमैंस मूर्तियां, कलेवर धारण करके, उस अंधेरे में परछाहीं की तरह हमारे आगे देख पड़ी थीं, उस पर १८५७ ईसवी के ग़दर के पश्चात् फिर उसी ताण्डव नृत्य की जगी तैयारी का विचार करके देह और मन सचमुच पुलकित और रोमाञ्चित हो रहे थे। पलटन के लोग बड़ी आन्तरिकता के साथ हम लोगों से बात चीत कर रहे थे। इस प्रकार घने पेड़ों के नीचे गुप्त रूप से हम लोगों की सलाह होते समय यदि कोई सिपाहियों में से ही जाकर अपने ऊँचे अफ़सरों को इसकी इत्तला दे आता तब तो कोर्ट मार्शल में सब की जान के लिए बड़ी मुसीबत में फँसना पड़ता। यही कारण था कि उस दिन पेड़ों के नीचे आकर वे लोग इस

प्रकार चोकन्ने थे। किन्तु मैंने उन्हें ऐसे करने से रोका, क्योंकि इस प्रकार की तैयारी मे छिपने-छिपाने का भाव वडी आसानी से ताड लिया जाता था, और इसीलिए मैंने वृक्षो की ओट में इस प्रकार छिपने के उद्योग का विरोध किया तथा इस प्रकार सन्दिग्ध भाव से वार वार इधर उधर ताकने की भी मुमानियत की थी। हम लोग कहीं भी जव इस प्रकार सलाह करने के लिए आपस में एकत्रित होते थे तव इस वात पर हम सव का सदा ध्यान रहता था कि सहज सरल भाव ही हम मे वना रहे, किसी प्रकार की चञ्चलता न आने पावे। किन्तु उस दिन मना कर देने पर भी जव सिपाहियों ने मेरी वात नहीं मान कर इस तरह चौकन्ने रहने मे ही भला समझा तव मैंने मन मे सोचा कि ये लोग यों ही भोले भाव से और अत्यन्त आग्रह की प्रेरणा से यहाँ चले आये हैं, एव इस वलवे की तैयारी मे ये जी जान से शामिल है। अतएव इस तरह हमारे पास आवा-जाही करने में अपनी जान को जोखिम मे समझ कर भी, मूसल की चोट का भय छोड कर ओखली मे सिर रख कर भी, वे लोग हमारे पास आने और वलवे की तैयारी की सलाह करने मे हिचकते न थे इस तरह वे न जाने कितनी वार हमारे पास आये होंगे।

उधर तो फौजी वारको में मेरी पहुँच हो गई और उधर वङ्गाल से लौटने पर कुछ ही दिनो में, अमरीका से लौटे हुए एक महाराष्ट्र युवक के आजाने से, पजाव के साथ और भी घना सम्वन्ध करने का नया जरिया मिल गया। इस महाराष्ट्र युवक का नाम पिङ्गले था। इन का पूरा मराठी नाम इस समय मुझे याद नहीं। स्वदेश को वपिस आते समय इन्हों ने जहाज पर ही निश्चय

कर लिया था कि पहले बङ्गाल के विप्लवपन्थी दल का बङ्गाल मे पता लगावेंगे और तब पजाब जावेंगे। कलकत्ते में विप्लव-दल के कई मनुष्यों से भेंट की, इस से पजाब मे बलवे की तैयारी होने की बात कलकत्ते भर मे फैल गई। इधर इन के कुछ मित्रों के साथ हमारे दल का भी सम्बन्ध था और इसी नाते से पिङ्गले हमारे दल में आगये। हमारे दल मे आते ही ये सीधे काशी भेज दिये गये। पिङ्गले ने कलकत्ते मे बहुत लोगों से बमगोले माँगे थे। उस समय समूचे बङ्गाल को प्रधानतया हमारे केन्द्र से ही बम गोले मिलते थे। अत एव बमगोलों के लिए पिङ्गले का घना सम्बन्ध हम लोगो से हो गया।

काशी में इन्हीं दिनों हमारे मन मे यह आशङ्का हो रही थी कि शायद अब हमारा सम्बन्ध पजाब से जुडना कठिन हो जाय, क्योंकि ५वीं डिसम्बर को पृथ्वीसिंह काशी आने वाले थे, किन्तु न तो उन के दर्शन हुए और न पजाब का ही कुछ समाचार मिला, ऐसे अवसर पर पिङ्गले के मिल जाने से ऐसी प्रसन्नता हुई मानो कुबेर का धन हाथ लग गया हो। पिङ्गले के आजाने से हम लोगों को सचमुच बडा आसरा मिल गया। इन की देह समुन्नत और बलिष्ठ थी, खूब गोरा रङ्ग था और इन की आखों तथा चेहरे से सुतीक्ष्ण बुद्धि झलकती थी। इस बुद्धिमत्ता ने उस दिन हमारे मन में खास जगह कर ली थी। इन्हें देखने और इन से बात चीत करने से हम लोगो को पक्का विश्वास हो गया था कि इन के हाथों हमारे बड़े काम सिद्ध होंगे किन्तु सच तो यह है कि मनुष्य को पहचान लेना बडा कठिन काम है।

मनुष्य जीवन का आदर्श कैसा हो,—इस सम्बन्ध मे

स्वभाव के प्रतिकूल होता है उसे या तो हम भूल जाते हैं व केवल खण्डन करने के लिए याद रखते हैं और खण्ड करने में जिन युक्तियों और घटनाओं से हमें सहायता मिल है उन्हें भी हम अपनी अवस्था और अभिज्ञता के साथ प्रा किया करते हैं।

याद आता है कि अन्दमान द्वीप मे रहते समय एक दि रामेन्द्र बाबू की विचित्र प्रसङ्ग नामक पुस्तक पढने से बिल कुल इसी ढग के अनेक प्रकार के विचार मन में गम्भीर भा से फैल गये थे और उन को मैंने अपनी नोट-बुक में लि रक्खा था। उन्हें मैं उपेन्द्र दादा (उपेन्द्रनाथ बैनर्जी जो वि युगान्तर के सम्पादक थे और जिन्हें अलिपुर वाले मामले कालापानी हुआ था) को प्राय दिखलाता और वे उन की तारीफ करते तो मन में बडा आनन्द होता था। अन्दमान की बातें जहाँ लिखी जायँगी वहीं बतलाया जायगा कि मेरी व नोट बुक किस तरह नष्ट हुई।

पिङ्गले को दो एक दिन काशी ठहरा कर पजाब भे दिया। उन का अनुरोध था कि पजाब से हम उन के पास वे हिसाब बम गोले भेज दें, अतएव उन से कहा गया कि गोले तो भेजे जा सक्ते हैं किन्तु एक एक बमगोले के बनाने में सोलह रुपए के लगभग खर्च बैठता है, इस लिए रुपए की मदद मिले बिना बेहिसाब बमगोलों का भेजा जाना कठिन है। इन से पृथ्वीसिह और करतारसिह की भी चर्चा कर दी गई। अब रुपये लाने और पजाबियों का कच्चा हाल जानने के लिए पिगले पजाब को गये। पिगले के पास इनके कुछ साथियों का

पता ठिकाना था। कोई एक हफ्ते में ही ये काशी लौट आये। अब रासबिहारी की पजाब-यात्रा में भी कुछ रोक टोक न थी। किन्तु उनके जाने के पहले मैं एक बार फिर पिंगले के साथ पजाब हो आया।

दिसम्बर महीने के सबेरे खासी ठण्ड पड रही थी जब मैं साधारण हिन्दुस्तानी के लिबास में पिंगले के साथ अमृतसर पहुचा। मैं तो पजाबी भाषा बोल न सकता था किन्तु पिङ्गले को इसका अभ्यास था। हम लोग एक गुरुद्वारे मे जाकर ठहरे। यहा पर पिंगले ने एक पजाबी मुखिया से मेरा परिचय कराया। इन का नाम मूलासिंह था।

मूलासिंह सघाई के पुलिस विभाग मे नौकर थे और वहाँ पर भी पुलिस के हडतालियों के मुखिया बने थे। इस बार उन लोगो से भी मेरा परिचय हुआ जो कि पिनाँग में नौकर रह चुके थे। इस समय मैंने बहुत से देहाती सिक्खों को यहाँ आते जाते देखा था। ये अधिकतर किसान या मजदूर थे, किन्तु ये भी देश का ... ने के लिए मतवाले हो रहे थे। सिक्ख सम्प्रदाय की ... दीक्षा है। इन में से बहुतेरों की देह खासी गठीली थी।

मूलासिंह को एक केन्द्र बनाने की आवश्यकता ... और इसके अनन्तर इन्हीं ने केन्द्र का भार ... यदि ये केन्द्रपति न बनते तो बहुत

... हुए कार्यकर्ता लोग इस ... ने का सुभीता

पता ठिकाना था। कोई एक हफ्ते में ही ये काशी लौट आये। अब रासबिहारी की पंजाब यात्रा में भी कुछ रोक टोक न थी। किन्तु उनके जाने के पहले मैं एक बार फिर पिंगले के साथ पंजाब हो आया।

दिसम्बर महीने के सबेरे खासी ठण्ड पड रही थी जब मैं साधारण हिन्दुस्तानी के लिबास में पिंगले के साथ अमृतसर पहुंचा। मैं तो पंजाबी भाषा बोल न सकता था किन्तु पिङ्गले को इसका अभ्यास था। हम लोग एक गुरुद्वारे में जाकर ठहरे। यहां पर पिंगले ने एक पंजाबी मुखिया से मेरा परिचय कराया। इन का नाम मूलासिंह था।

मूलासिंह संघाई के पुलिस विभाग में नौकर थे और वहाँ पर भी पुलिस के हड़तालियों के मुखिया बने थे। इस बार उन लोगों से भी मेरा परिचय हुआ जो कि पिनॉग में नौकर रह चुके थे। इस समय मैंने बहुत से देहाती सिक्खों को यहाँ आते जाते देखा था। ये अधिकतर किसान या मजदूर थे, किन्तु ये भी देश का काम करने के लिए मतवाले हो रहे थे। सिक्ख सम्प्रदाय की ऐसी ही शिक्षा दीक्षा है। इन में से बहुतेरों की देह खासी गठीली और कसी हुई थी।

इस बार मैंने मूलासिंह को एक केन्द्र बनाने की आवश्यकता भली भांति समझाई और इसके अनन्तर इन्हीं ने केन्द्र का भार ग्रहण किया। किन्तु यदि ये केन्द्रपति न बनते तो बहुत अच्छा होता।

पंजाब के विभिन्न स्थानों से आये हुए कार्यकर्ता लोग इस समय हाथ में कुछ काम न होने और खाने पहनने का सुभीता

न रहने के कारण कुनमुना रहे थे और इन में से बहुतों के दिल में एक तरह से असन्तोष की आग धधक रही थी इसका दायित्व प्रधानतया मूलासिंह पर ही था । ये सब लोग जी लगा कर देश का काम करने के लिए दूर दूर से घर द्वार और अपना काम काज छोड कर आये हुए थे । इन में से कोई भी जीविका के लिए कुछ उद्योग नहीं करता था और उस समय जैसी दशा थी उस के लिहाज से उद्योग करने का कुछ सुभीता भी न था । इस समय यदि दो रोटियो के लिए शाम सवेरे नेताओ से तकाजा करना पडे तो इस काम में सचमुच सभी का चिढ जाना सम्भव है । ये सभी लोग गुरु द्वारे में तो रहते और पास के होटल मे खाते थे । हमारे यहा देश का काम करते समय अक्सर इस तरह के मामूली छोटे छोटे कामो ने बहुतो के दिलो को दुखाया है और इसके फल स्वरूप कई अवसरों पर बहुत कुछ अनर्थ भी हुए हैं। इस से कई बार इस बात पर ध्यान जाता है कि जब तक गाँठ में काफी रकम न हो तब तक दूसरो की दी हुई रोटियों के भरोसे देश का और दस भाइयों को कार्य करने का तैयार होना ठीक नहीं। फिर यह भी देखा है कि आर्थिक स्वाधीनता प्राप्त करने की चेष्टा में प्राय अर्थ उपार्जन करना ही मुख्य काम हो जाता है और तन मन से देश का काम न किया जाय तो प्राय कुछ भी नहीं होता। इस के सिवा काम न रहने से भी बहुत से दल नष्ट हो चुके हैं । इस समय पजाब में उपयुक्त नेता न रहने के कारण वहा बहुतेरे कार्य कर्ता हाथ पर हाथ रक्खे सुस्त हो पडे थे, काम न किया जाने के कारण देश चौपट

हो रहा था और मजा यह कि काम करने वालों को खोज पर भी काम न मिलता था। रासबिहारी ही ऐसे नेता' जिन्हो ने उन्मत्त जनसघ को कुछ परिमाण में सुनियन्त्रित क लिया था। मैंने भी इस गोल माल को सुधारने की भर म कोशिश की थी। मूलासिंह से मुझे मालूम हुआ कि बलवा हो पर बहुत सी रेजीमेंटों ने देशवासियों के अनुकूल हो जाने क वचन दिया है। जिन पल्टनों में इस समय तक मनुष्य नहीं भेजे गये थे उन की मैंने एक फेहरिस्त बनाई और विभिन्न प्रदेशों से आए हुए पजाबी कार्य कर्ताओं को उल्लिखित पल्टनों में भेजने की व्यवस्था की।

मूलासिंह से मेरा परिचय करा के पिछले अन्यान्य परिचित सिक्खों की तलाश में 'मुक्तसर' के मेले को गये। इस मुक्तसर के मेले का थोडा सा अद्भुत इतिहास पाठकों को सुनाए बिना मुझ से नहीं रहा जाता।

एक बार 'आनन्दपुर' के किले में गुरु गोबिन्दसिंह अपने परिवार और अन्याय लोगों के साथ घेर लिये गये। यह घेरा लगातार सात महीने तक रहा। घेरे के कारण दोनों दल—जो किले में घिरे हुये थे और जो लोग बाहर से घेरा डाले हुए थे—बहुत ऊब गये। मुसलमानो की ओर से बार बार गुरु से 'आनन्दपुर' छोड कर चले जाने का प्रस्ताव किया गया किन्तु गुरु ने इस पर विचार नहीं किया। गुरु को इस प्रस्ताव पर किसी भी तरह राजी न होते देख बाहर जाने की इच्छा से कुछ सिक्खों ने गुरु जी की स्त्री गुजरी को यहा से हट जाने के प्रस्ताव पर राजी कर लिया किन्तु गुरु गोविन्द सिंह इतने पर

निश्चय से विचलित न हुए। भूख के कारण बहुतेरे सिक्ख अधीर हो रहे थे। पेट की ज्वाला के कारण उस समय वे गुरु की आज्ञा टालने पर उतारू हो गये। तब गुरु गोविन्द सिंह ने कहा—'तुम लोग अब तक सिक्ख गुरु के आश्रय मे थे, किन्तु अब भूख के मारे बेचैन हो गुरु का वाक्य लघन करके शत्रुओं के हाथ में आत्म समर्पण करने जा रहे हो। इस मे सिक्ख गुरु की कोई जवाबदारी नहीं है। अतएव इस के लिए 'बे दावा' लिख कर चाहे जहा चले जाओ। और सब सिक्ख तो इस प्रकार "बे दावा" लिख कर गुरु को वहीं छोड कर चलते हुए किन्तु ४० सिक्खों ने गुरु का साथ नहीं छोडा। अन्त में गुरु गोविन्द सिंह को भी वह स्थान छोडना पडा और शत्रु के पीछा करने पर वे अनेक स्थानो मे बचाव के लिए दौड धूप करने लगे। किन्तु उन चालीस सिक्खो नें किसी भी दशा मे गुरु का साथ नहीं छोडा। इस प्रकार घूमते फिरते हुए गुरु गोविन्दसिंह जब मद्र देश में पहुचे तब उन 'बे दावा' सिक्खो में से बहुतो ने आकर गुरु से भेंट की। अब इन्हो ने शत्रु से सन्धि करने के लिए गुरु जी से दुबारा अनुरोध किया। इस पर गोविन्द सिंह ने कहा कि "जो तुम चाहो तो यह लिख कर चले जा सकते हो कि हम सिक्ख नहीं हैं।" तब 'हम सिक्ख नहीं हैं" यह बात लिख कर और वह पत्र गुरुजी को दे कर चालीस सिक्ख चले गये। किन्तु इस सङ्कट के समय पर श्री गुरु को छोड कर चले जाने के कुछ ही देर बाद उन लोगों के मनमें बडा पछतावा हुआ। इधर 'खेदराना" नामक तालाब के समीप शत्रु दल ने फिर गुरु गोविन्दसिंह पर हमला किया। घोर सग्राम करते क

ने देखा कि किसी ओर से एक दल ने आ कर शत्रुपक्ष पर धावा बोल दिया है। गुरु गोविन्दसिंह की समझ मे न आया कि इस विपत्ति के समय में यह हमारी सहायता करने कौन आ पहुँचा है। इन नये आये हुए योद्धाओं की मार के आगे मुसलमान ढीले पड गये किन्तु थोडी देर युद्ध करके प्राय सभी जूझ गए। इस तरह एक मुसलमान के बल्लम से निहत व्यक्ति की लाश उठा कर देखा तो वह लाश एक स्त्री की निकली इसका नाम माई भागो था। इसी की सलाह और प्रेरणा से "बे दावा" सिक्खों ने अपनी भूल को सुधारने का मार्ग ढूढ निकाला था। युद्ध का अन्त हो चुकने पर गुरु गोविन्दसिंह, रणभूमि में लेटे हुए प्रत्येक मृत सिक्ख के पास जा कर उस के धूल में लिपटे हुए मुँह को पोछ कर वैसी हिफाजत और आदर कर रहे थे जैसा कि पिता अपने पुत्र का करता है। अन्त में उन्हो ने देखा कि एक व्यक्ति में उस समय तक प्राण थे। इसका नाम महा सिंह था। महासिंह के मस्तक को अपनी गोद में रख कर और उसके सिर पर हाथ फेरते फेरते गुरु गोविन्दसिंह ने पूछा—"महासिंह, तुम क्या चाहते हो?" महासिंह की आँखों मे आँसू भर आए। उसने कहा—'मैं यही चाहता हूँ कि हम लोगो के उस पत्र को फाड डालिए जिसमें हम लोगों ने लिख दिया था कि 'हम लोग सिक्ख नहीं हैं।' अब गुरुजी ने समझा कि दूसरी ओर से शत्रु पर किसने हमला किया था गुरु जी ने देखा उन चालीसो सिक्खो ने रणक्षेत्र में प्राण दे दिये हैं। लाशों में उन्हो ने स्त्रियों की भी लाशें देखीं। अब "सिक्ख नहीं' वाला पत्र गुरु जी ने फाड कर फेंक

दिया । महासिंह भी महानिद्रा में मग्न हो गया । वहाँ पर जो लोग उपस्थित थे उन मे गुरु गोविन्दसिंह ने कहा कि 'जिस खालसा" मे ऐसे महाप्राण हैं वह खालसा सहज ही नष्ट नहीं होगा । जहाँ पर एक भी भक्त प्राण आत्माहुति देता है वह स्थान पवित्र हो जाता है । यहाँ पर तो इतने अधिक महाप्राण व्यक्तियों ने प्राण दे डाले हैं, इस लिए इस स्थान का नाम 'मुक्तसर हुआ और यहा के तालाब मे जो कोई स्नान करेगा, मुक्त हो जायगा। इस प्रकार मुक्तसर मेले की उत्पत्ति हुई । यह सिक्खों का महामेला है । यहाँ पर हर साल एक लाख से अधिक सिक्खो का जमाव होता है । सिक्खों के प्रत्येक उत्सव के साथ ऐसे एक न एक अपूर्व इतिहास की कथा सलग्न है और हर एक सिक्ख का ऐसे उत्सव और उमङ्ग के बीच लालन पालन होता तथा ऐसी ही आबहवा में वह मनुष्य बनता है । मेरी समझ से तो सिक्ख जाति भारत की एक अपूर्व जाति है ।

पिछले जिस समय "मुक्तसर" के मेले से लौट कर आए उस समय कर्तारसिंह अमरसिंह आदि सभी गुरुद्वारे में उपस्थित थे । मुझे देख कर कर्तारसिंह बहुत ही प्रसन्न हुए और पूछा कि 'बोलो, रासबिहारी कब आवेंगे ? मैंने कहा— "बस, अब उन्हीं का नम्बर है, यहाँ ठहरने के लिए कुछ इन्तजाम हो जाय और आप का काम भी तनिक सिलसिले से होने लगे, बस फिर उन के आने में देर नहीं ।" इस समय मैंने कर्तारसिंह को केन्द्र की आवश्यकता विशेष रूप स समझाई और यह भी कहा केन्द्र का भार मूलासिंह ने ग्रहण कर लिया है । रासबिहारी के लिए अमृतसर और लाहौर

में दो दो किराये के मकान लेने को कह दिया। इन सारी बातों के सम्बन्ध में रास ने मुझ से पहले ही कह रक्खा था एक ही समय में विभिन्न स्थानों पर कई मकान अपने अधिकार में होने चाहिए। सो ऐसा ही किया गया। अमृतसर का मकान तो मैंने ही देख कर पसन्द किया। लाहौर में मकान लेने के लिए दूसरा आदमी भेजा गया। पंजाब की इस समय की दशा का हाल कर्तारसिंह से सुन कर मुझे बहुत कुछ आशा हुई। मैंने सोचा कि इस बार सचमुच कुछ कहने लायक काम हो रहे है इस समय सिक्खों का एक और दल अमृतसर में आया। यह दल अमेरिका से लौट कर आया था इस दल के कुछ नेताओं को मैंने देखा इन में एक तो इतने बूढे थे कि उनके गालों में झुर्रियां पड कर लटकने को थीं। मेरा ख्याल है कि ये वही वृद्ध पुरुष थे जिन्होंने अन्दमान टापू में भी बडे तेज के साथ अपना थोडा सा समय बिता कर ६० या ७० वर्ष की अवस्था में उसी द्वीप में जीवन को विसर्जित कर दिया। इस बुढापे में भी इन्होंने अन्दमान में हडतालियों के साथ हडताल करने में कभी पीछे पैर नहीं रक्खा। इस दल का कोई व्यक्ति उस समय अपने घर न पहुंचा था। अमेरिका से भारत में आकर, अमृतसर मे ही ये लोग ठहरे थे इन्होंने अपनी गाढी कमाई में से हम लोगों को ५००) दिये थे।

इन दिनों कर्तारसिंह अद्भुत परिश्रम करते थे। वे प्रति दिन साइकल पर बैठकर देहात में कोई ४०–५० मील का चक्कर लगाते थे। गांव गांव में काम करने को जाते थे। इतना परि-

श्रम करने पर भी ये थकते नहीं थे। जितना ही ये परिश्रम करते थे उतना ही मानों उन में फुर्ती आती थी। देहात का चक्कर लगा कर अब ये उन पल्टनों में गए जिन मे कि काम नहीं किया गया था। उन लोगों के काम करने का ढंग इतना कच्चा था कि जिस से इस समय इन मे से बहुतों की गिरफ्तारी के लिए वारण्ट निकला। कर्त्तारसिंह को गिरफ्तार करने के लिए इस समय पुलिस ने एक गाँव को जाकर घेर लिया उस समय कर्तारसिंह गाँव के पास ही कहीं मौजूद थे पुलिस के आने की खबर पाते ही साइकिल पर सवार हो वे उस गाँव मे आगए पुलिस उन्हे पहचानती न थी। उस मर्तबा कर्तारसिंह इसी असम-साहसकिता के कारण साफ बच गये। यदि वे ऐसा न करते तो रास्ते मे ही बहुत करके पकड़ लिये जाते।

इस समय रुपये-पैसे का खर्च इतना अधिक बढ गया था कि अब दान की रकम से काम न चलता था इस लिए अब ये कुछ कुछ डकैती करने के लिए लाचार हुए। पीछे से मालूम हुआ कि मूलासिंह भला आदमी न था, इसने दल का रुपया पैसा भी हड़प लिया। जिस समय ये बातें मलूम हुई उस समय सुधार का कोई उपाय नहीं था। क्योंकि जहाँ तक मुझे स्मरण है, यह इसके थोड़े ही दिन बाद नशे की हालत में शीघ्र ही गिरफ्तार कर लिया गया। इस के सिवा व्यक्तिगत शत्रुता के कारण इस ने एक आदमी के यहाँ डकैती भी कराई थी।

सभी बड़े बड़े आन्दोलनो में देखा गया है कि साधु और महत् चरित्रवान् पुरुषो के साथ ऐसे ऐसे नर पिशाच भी दल मे आ

मिलते हैं। यह आन्दोलनों का दोष नहीं है, यह तो हमारे मनुष्य चरित्र का ऐब है। शायद लेनिन ने भी कहा था कि प्रत्येक सच्चे बोल्शेविक के साथ कम से कम ३९ बदमाश और ६० मूर्ख उनके दल में मिल गये थे(Russia's Ruin, P 249 by E Wilcox) और मैंने श्रद्धेय शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय जी से सुना है कि देश-बन्धु दास ने भी कदाचित् कहा था कि वकालत करते करते हम बुड्ढे हो गये और इस बीच हम को बड़े बड़े धोखेबाजों से भी साबिका पड़ा किन्तु असहयोग आन्दोलन में हमने जितने धोखेबाज और दगाबाज आदमी देखे हैं वैसे जिन्दगी भर में नहीं देखे।

मैं इस बार पंजाब में हफ्ते भर के लगभग इन लोगों के साथ रहा। अतएव इन के बहुत से आचार व्यवहारों को मैंने ध्यान से देखा। यद्यपि ये लोग कड़ाके की ठण्ड में भी बहुत ही तड़के नहा धोकर ग्रन्थसाहब इत्यादि का पाठ करते थे किन्तु होटल में भोजन करने के कारण इन का खान पान शुद्धतापूर्वक न होता था परन्तु इन का आपस का बर्ताव बहुत ही भला था। एक दूसरे को बुलाते या बात चीत करते समय ये 'सन्तों" "भजनो" "बादशाह" इत्यादि सम्मान सूचक शब्दों के सिवा और किसी शब्द का प्रयोग न करते थे। इस बार भाई निधानसिंह से मेरी मुलाकात हुई। यही वह ५० वर्ष के वृद्ध सिक्ख थे। ये कोई ३० ३५ वर्ष से देश के बाहर थे और चीन में रहते समय एक चीनी सुन्दरी से इन्होंने विवाह कर लिया था। मैं इन्हें अक्सर धर्म चर्चा और धर्म-ग्रन्थ का पाठ करते देखता। एक बार मैंने स्टेशन पर जाकर देखा कि वहाँ प्लेटफार्म पर बैठे हुए आप छोटी सी धर्मपुस्तक को मन ही मन पढ़ रहे हैं। वे सिर्फ दिखावे

के लिए कुछ ऐसा नहीं करते थे क्योकि मैंने अन्दमान में भी इन की यही दशा देखी थी। मैंने इन मे जैसे तेज देखा है वैसा नौजवानों भी मे नहीं देखा है।

साधारणतया पजावियों का चाल-चलन अच्छा नहीं होता, फिर पजावियों के बीच सिक्खों का चरित्र तो और भी जघन्य है। शायद इसका प्रधान कारण पजाव मे पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की सख्या बहुत ही कम होना है। इसके सिवा पजाव प्रान्त शायद तमोगुणी राजसिक भाव से परिपूर्ण है। लगातार मुद्दत से विदेशियों के सघर्ष मे रहने के कारण क्रमश निम्नतर सभ्यता के सस्पर्श में आकर यहाँ की सभ्यता मानो धीरे धीरे फीकी पड गई है। अवनति के दिनो मे यह विदेशियों का सस्पर्श जैसा हानिकारक है वैसा ही उन्नति के जमाने में इससे सर्वश्रेष्ठ सभ्यता का विकास भी हो सकता है। जो लोग बुरे मार्ग पर बहुत आसानी से चले जाते हैं उनमें भले बनने की भी बहुत कुछ सामर्थ्य है, और वह शायद उतनी और लोगो मे न हो। इस कारण असंयम, निष्ठुरता, नीचता और हिंसा वृत्ति से सिक्खों का चरित्र जिस प्रकार कलङ्कित है उसी प्रकार सयम, उदारता और क्षमा वृत्ति मे भी वे लोग अपना सानी नहीं रखते। तभी तो इन गये-बीते दिनों मे भी अध पतित सिक्ख जाति ने "ननकाना साहब" और "गुरु का बाग" मे अद्भुत वीरत्व और सयम का नमूना दिखला दिया।

पजाव में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ ही अधिक बदनाम हैं किन्तु इसी पजाब मे उस दिन सतीत्व की ऐसी　　ज्योति स्निग्ध किरण प्रकट हुई थी कि जिसकी तुलना इस

में मिलना कठिन है। । डी० ए० वी० कालेज लाहौर के भूतपूर्व अध्यापक भाई परमानन्द के छोटे चचा के बेटे, भाई बाल मुकुन्द, दिल्ली षड्यन्त्र वाले मुकदमे मे गिरफ्तार किये गये। इन्हीं बालमुकन्द के पूर्वपुरुष मोतीदास को सिक्खों के अभ्युत्थान-समय में आरे से चीर कर मार डाला गया था। गिरफ्तार होने से एक वर्ष पहले भाई बालमुकुन्द का विवाह हुआ था। इन की स्त्री श्रीमती रामराखी परम सुन्दरी ललना थीं। उम्र इन की नई थी ही। जिस दिन इन के स्वामी गिरफ्तार हुए उसी दिन से ये व्याकुल हो गई और अनेक प्रकार से देह को सुखाने लगीं। फिर जब भाई बालमुकुन्द को फांसी का हुक्म होगया तब ये उनसे मिलने गई। किन्तु इनके मर्माश्रुओं ने, जी भर कर स्वामी के दर्शन न करने दिये। घर लौट कर ये एक प्रकार से अधमरी दशा में समय बिताने लगीं। एक दिन ये अपने कमरे मे थीं कि बाहर मे रोने का कोलाहल सुन पडा। कमरे मे बाहर आने पर श्रीमती रामराखी को असल बात मालूम हो गई। ये अन और न सहन कर सकीं स्वामी का मृत्यु समाचार पाकर सती साध्वी, दासी नीरोग दशा में स्वामी का ध्यान लगा कर मानो स्वामी से जा मिलीं मिट्टी मे मिल जाने के लिए ही मानो उन की देह इस लोक मे पडी रह गई। ऐसे पतिप्रेम और आत्मोत्सर्ग की तुलना है कहीं? इस घटना का स्मरण आने से ही देह और मन पुलकित होकर कण्टकित हो ... की गृहिणी! तुम धन्य हो। ऐसी स्त्री-के ... सकता है! हाय रे भारत के ... भी तुझे न बदा था!



भाई बालमुकुन्द

कलकत्ता विभाग के एक सुप्रसिद्ध नेता, श्रीयुत यतीन्द्रनाथ मुखोपध्याय, इन्हीं दिनों काशी आये। विप्लव-युग के श्रेष्ठ कार्यकर्ताओं के बीच इन का स्थान बहुत उच्च है। इतिहास में अक्सर देखा जाता है कि जब कोई नया आन्दोलन समाज अथवा राष्ट्र की इच्छा के विरुद्ध सिर उठाता है तब वैसे आन्दोलन के जो लोग प्राण स्वरूप होते हैं उनका चरित्र अनन्य साधारण हुए बिना वह आन्दोलन कारगर नहीं हो सकता। इसी से जिस समय कोई सम्प्रदाय राज रोष में दग्ध किया जाता अथवा समाज के निग्रह में पीसा जाता है उस समय भी उस सम्प्रदाय के व्यक्तियों के चरित्र में कुछ न कुछ विशेषता अवश्य रहती है। यही कारण है कि ऐसे सम्प्रदायों की सदस्य संख्या स्वल्प होते हुए भी समाज पर उन का कुछ कम प्रभाव नहीं पड़ता। विगत विप्लव के इतिहास से भी इस सत्य तत्व की सचाई सिद्ध हुई है। यतीन्द्र बाबू ऐसे ही सम्प्रदाय के प्राण स्वरूप थे और कई विभिन्न सम्प्रदायों पर उन्होंने अपने चरित्र बल से अपना सुदृढ आधिपत्य जमा लिया था।

बलवे का काम काज बहुत ही गुप्त रीति से करना पड़ता था और वैसे वैसे शक्तिशाली महापुरुषों की सर्वग्राही प्रतिभा का आश्रय न मिलने से भारत के विभिन्न स्थानों में बलवे के लिए भिन्न भिन्न कितने ही दल बन गये थे। उन का शायद अब तक भली भान्ति पता भी नहीं लगा। छोटे छोटे स्वतन्त्र दल हो जाने से भला हुआ या बुरा, यह कहना कठिन है।

इन वि[illegible] को सम्मिलित करके एक विराट् दल के रूप में [illegible] बहुत दिनों से किया जा

नवाँ परिच्छेद

काशी केन्द्र की कहानी

इस बार पंजाब मे नया उत्साह लेकर
-काशी आने पर मुझे ऐसा जँचा मानों अब
चार और अनियमों में था । मैं नहीं कह
मुकाबले में काशी कितनी मनोहर और
मालूम नहीं कि ऐसा क्यों हुआ, किन्तु इस
स्निग्ध रूप का अनुभव किया था उस का
से रहने पर भी मुझे नहीं हुआ था। देह
ही ऐसा मालूम हुआ कि बहुत दिनों
गई। काशी में सिर्फ एक दिन रहने
बहुत दिनो की सञ्चित ग्लानि दूर हो
चलने की तैयारी व्यर्थ हो
में वापिस आये तब उनके मन
हुआ था।

काशी लौट आने पर पूर्व
हमारे पूर्व परिचित एक नेता इस से
इसी ने, ऐसी आशा के दिन,
से मुझे एक अनिर्दिष्ट
ज्यों ही थोड़ी सी फुर
होने लगता कि आज वे
आनन्द को उस दिन सभी के
विच्छेद प्राणों को बहुत ही

कलकत्ता विभाग के एक सुप्रसिद्ध नेता, श्रीयुत यतीन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, इन्हीं दिनों काशी आये। विप्लव-युग के श्रेष्ठ कार्यकर्त्ताओं के बीच इन का स्थान बहुत उच्च है। इतिहास में अक्सर देखा जाता है कि जब कोई नया आन्दोलन समाज अथवा राष्ट्र की इच्छा के विरुद्ध सिर उठाता है तब वैसे आन्दोलन के जो लोग प्राण स्वरूप होते हैं उनका चरित्र अनन्य साधारण हुए बिना वह आन्दोलन कारगर नहीं हो सकता। इसी से जिस समय कोई सम्प्रदाय राज रोष में दग्ध किया जाता अथवा समाज के निग्रह में पीसा जाता है उस समय भी उस सम्प्रदाय के व्यक्तियों के चरित्र में कुछ न कुछ विशेषता अवश्य रहती है। यही कारण है कि ऐसे सम्प्रदायों की सदस्य संख्या स्वल्प होते हुए भी समाज र उन का कुछ कम प्रभाव नहीं पड़ता। विगत विप्लव के इतिहास ं भी इस सत्य तत्व की सचाई सिद्ध हुई है। यतीन्द्र बाबू ऐसे ी सम्प्रदाय के प्राण स्वरूप थे और कई विभिन्न सम्प्रदायों पर उन्होंने अपने चरित्र बल से अपना सुदृढ़ आधिपत्य जमा लिया था।

दलों का कामकाज बहुत ही गुप्त रीति से करना पड़ता था और वैसे वैसे शक्तिशाली महापुरुषों की सर्वग्राही प्रतिभा का आश्रय न मिलने से भारत के विभिन्न स्थानों में दलों के लिए भिन्न भिन्न कितने ही दल बन गये थे। उन का शायद अब तक भली भान्ति पता भी नहीं लगा। छोटे छोटे स्वतन्त्र दल हो जाने से भला हुआ या बुरा, यह कहना कठिन है।

इन विभिन्न दलों को सम्मिलित करके एक विराट् दल के रूप में परिणत करने का उद्योग बहुत दिनों से किया जा

नवाँ परिच्छेद

काशी केन्द्र की कहानी

इस बार पंजाब मे नया उत्साह लेकर लौटने पर भी काशी आने पर मुझे ऐसा जँचा मानों अब तक बहुत अनाचार और अनियमों में था। मैं नहीं कह सकता कि पंजाब के मुकाबले में काशी कितनी मनोहर और पुनीत मालूम हुई। मालूम नहीं कि ऐसा क्यों हुआ, किन्तु इस मर्तबा काशी के जिस स्निग्ध रूप का अनुभव किया था उस का अनुभव काशी में मुद्दत से रहने पर भी मुझे नहीं हुआ था। देह में काशी की हवा लगते ही ऐसा मालूम हुआ कि बहुत दिनों की अपवित्र देह शुद्ध हो गई। काशी में सिर्फ एक दिन रहने से ही ऐसा जान पड़ा कि बहुत दिनो की सञ्चित ग्लानि दूर हो गई।

बलवे की तैयारी व्यर्थ हो जाने पर रासबिहारी जब काशी में वापिस आये तब उनके मन में भी बिल्कुल ऐसा ही भाव हुआ था।

काशी लौट आने पर पूर्व बङ्गाल के एक नेता से भेंट हुई। हमारे पूर्व परिचित एक नेता इस से पहले ही गिरफ्तार हो चुके थे। इसी से, ऐसी आशा के दिन, सभी पूर्व परिचित पुरुषों के जेल में चले जाने से मुझे एक अनिर्दिष्ट वेदना हो रही थी, इतने काम काज के बीच ज्यों ही थोडी सी फुरसत मिल जाती त्यों ही अक्सर यह विचार होने लगता कि आज वे लोग क्यों हमारे साथ नहीं हैं। उस आनन्द को उस दिन सभों के साथ न लूट सकने से जब तब वह विच्छेद प्राणों को बहुत ही सताने लगता था।

कलकत्ता विभाग के एक सुप्रसिद्ध नेता, श्रीयुत यतीन्द्रनाथ मुखोपध्याय, इन्हीं दिनों काशी आये। विप्लव-युग के श्रेष्ठ कार्य कर्ताओं के बीच इन का स्थान बहुत उच्च है। इतिहास में अक्सर देखा जाता है कि जब कोई नया आन्दोलन समाज अथवा राष्ट्र की इच्छा के विरुद्ध सिर उठाता है तब वैसे आन्दोलन के जो लोग प्राण स्वरूप होते हैं उनका चरित्र अनन्य साधारण हुए बिना वह आन्दोलन कारगर नहीं हो सकता। इसी से जिस समय कोई सम्प्रदाय राज रोष में दग्ध किया जाता अथवा समाज के निग्रह में पीसा जाता है उस समय भी उस सम्प्रदाय के व्यक्तियों के चरित्र में कुछ न कुछ विशेषता अवश्य रहती है। यही कारण है कि ऐसे सम्प्रदायों की सदस्य संख्या स्वल्प होते हुए भी समाज पर उन का कुछ कम प्रभाव नहीं पड़ता। विगत विप्लव के इतिहास से भी इस सत्य तत्व की सचाई सिद्ध हुई है। यतीन्द्र बाबू ऐसे ही सम्प्रदाय के प्राण स्वरूप थे और कई विभिन्न सम्प्रदायों पर उन्होंने अपने चरित्र बल से अपना सुदृढ़ आधिपत्य जमा लिया था।

बलवे का काम काज बहुत ही गुप्त रीति से करना पड़ता था और वैसे वैसे शक्तिशाली महापुरुषों की सर्वग्राही प्रतिभा का आश्रय न मिलने से भारत के विभिन्न स्थानों में बलवे के लिए भिन्न भिन्न कितने ही दल बन गये थे। उन का शायद अब तक भली भान्ति पता भी नहीं लगा। छोटे छोटे स्वतन्त्र दल हो जाने से भला हुआ या बुरा, यह कहना कठिन है।

इन विभिन्न दलों को सम्मिलित करके एक विराट् दल के रूप में परिणत करने का उद्योग बहुत दिनों से

रहा था किन्तु कोई शक्तिशाली नेता न रहने से किसी भी दल ने दूसरे दल में मिल कर अपनी स्वतन्त्रता को खो डालना स्वीकार नहीं किया । और इन दलों के मुखिया लोग ही अक्सर अपने साधारण आधिपत्य को बनाये रखने के लिए ऐसे मिलन के विरोधी थे । 'मनुष्य सहज ही पराई अधीनता स्वीकार करने को तैयार नहीं हो जाता, फिर सचमुच शक्तिशाली पुरुष के आगे उसे माथा झुकाना ही पडता है ।' जिस समय किसी अभिनव आदर्श अथवा विचित्र कार्य की प्रेरणा से मनुष्य जाग पडता है उस समय ये सारे तुच्छ व्यक्तिगत अहङ्कार और स्वार्थपरताएँ फिर सिर नहीं उठा सकतीं ।

यतीन्द्र बाबू का नेतृत्व इस ढग का था कि जिस के प्रभाव से बङ्गाल के बहुत से छोटे छोटे दल एक मे मिल गये थे। यद्यपि यतीन्द्र बाबू कोई धुरन्धर विद्वान् नहीं थे किन्तु इन के चरित्र के प्रभाव से बहुतेरे शिक्षित युवकों ने इन्हें आत्मसमर्पण कर दिया था । इन मे जैसा अतुल साहस था वैसे ही इन के प्राण भी उदार थे। इन के चरित्र बल की बातें बङ्गाल के विप्लव पन्थी लोगों को भली भाति मालूम हैं। किन्तु इन भिन्न भिन्न दलो का एक सूत्र मे आबद्ध होना उसी दिन सम्भव हुआ जिस दिन कि पजाब में गदर होने की तैयारी के समाचार से एक नये काम की प्रेरणा ने उन सब को उतावला कर दिया था । किन्तु फिर भी इस मिलन-कार्य में यतीन्द्र बाबू का चरित्र बहुत ही सुन्दर रूप मे प्रकट हुआ है। क्योंकि दल के भिन्न भिन्न सम्प्रदायों में कुछ इने गिने ही आदमी न थे। इन

सब का स्वभाव और चरित्र मामूली आदमियों के जैसा नहीं था। उन सब के मन पर आधिपत्य कर लेना कुछ मामूली शक्ति का काम नहीं है।

सच तो यह है कि बङ्गाल में इस समय चलने का उद्योग करने वाले दो ही दल थे। इन में से एक के मुखिया यतीन्द्र बाबू थे। दूसरे दल के दो भाग किये जा सकते हैं, एक बङ्गाल के बाहर काम करता था और दूसरे ने बङ्गाल के भीतर ही अपना कार्य्यक्षेत्र बना रक्खा था। बङ्गाल के बाहर की कुछ जिम्मेदारी रासबिहारी को दी गई थी, किन्तु बङ्गाल के भीतर जो काम हो रहा था उस का भार किसी एक व्यक्ति पर न था।

यतीन्द्र बाबू काशी इस लिए बुलाये गये थे जिस में कि सारा उत्तर भारत एक सूत्र में और एक सुर में कर लिया जाय। इस प्रकार पंजाब के सीमान्त प्रदेश से लेकर पूर्व बङ्गाल और आसाम की सीमा तक समूचा देश एक सङ्गठन में रह कर चलने के लिए तैयार हो रहा था। पंजाब के सिपाही इस समय कुछ कर दिखाने के लिए ऐसे उतावले हो गये थे कि अब किसी भी तरह उन्हें शान्त न रखा जा सकता था। मैं नहीं कह सकता कि इस प्रकार उन्हें संयत कर देना अच्छा हुआ या बुरा, क्योंकि यदि हम लोगों की रोक टोक न रहती तो पंजाब में अवश्य ही कुछ न कुछ भीषण घटना हो जाती और कौन कह सकता है कि उस का फल क्या और कैसा होता। हम लोगों ने उन की जल्दबाजी को इस लिए रोका था कि सारा देश एक मत से बलने के ताण्डव नृत्य में सम्मिलित हो जाय।

मालूम नहीं, यतीन्द्र बाबू के काशी आने का हाल सरकार को कुछ ज्ञात हुआ था या नहीं, और यदि ज्ञात हुआ तो कितना। मैं बतलाता हूँ कि यहा पर उस बात का उल्लेख मैंने किस लिए किया है। यहाँ तक मैंने जो कुछ लिखा है उस में एक भी गुप्त बात प्रकट नहीं की गई, यहाँ तो मैंने उन्हीं घटनाओं का उल्लेख किया है जिन पर कि षड्यन्त्र-सम्बन्धी मुकदमों मे प्रकाश पड चुका है और जो अदालतों मे प्रमाणित हो चुकी हैं। कुछ बातें तो ऐसी भी हैं जिन्हें सरकारी पक्ष ठीक ठीक नहीं जानता किन्तु इन घटनाओ को भी मैंने छोड दिया है। क्योंकि उन घटनाओं को समर्थन करने योग्य उपयुक्त प्रमाण इस समय तक सरकार के पास नहीं हैं। जिन घटनाओं के प्रकट होने से किसी पर तनिक भी आँच आने की सम्भावना नहीं है और जिन्हें सरकार तो भली भाँति जानती है किन्तु हमारे देशवासी जिन के अत्यन्त अस्पष्ट आभास के सिवा और कुछ भी नहीं जानते ऐसी ही घटनाओं का वर्णन मैं अपनी क्षीण शक्ति के अनुसार करना चाहता हूँ। विगत युद्ध के समय भारत मे जो षड्यन्त्र सबन्धी मुकदमे हुए थे उन की सुनाई अधिकतर जेलो मे ही हुई थी, उन मुकदमों का कच्चा हाल जनता को प्राय मालूम ही नहीं हुआ क्योंकि पुलिस और न्याय कर्ता को जो समाचार पसन्द न होता था, तथा न्यायकर्ताओं के सामने जो प्रमाणित तक हो चुका था वह भी प्रकट न किया जाता था इन कारणो से वे घटनाएँ बहुतो के लिए बिलकुल ही नई होंगी। मैं सिर्फ यही चाहता हूँ कि जो बातें सरकार तक पहुँचे गई हैं उन से जनता भी परिचित हो जाय। जो सचमुच

एक दिन देश मे हुआ था और जिस को जान लेने से अपनी शक्ति सामर्थ्य का ज्ञान हो जाता है, और यह भी मालूम हो जाता है कि किस जगह हमारी दुर्बलता थी, कहाँ हम ने दुर्बुद्धि का परिचय दिया था और किस स्थान पर हमारे मन की सङ्कीर्णता तथा कार्य की त्रुटि प्रकट हुई थी—इसी मे मैं उन घटनाओं पर निःसङ्कोच होकर प्रकाश डालना चाहता हूँ। इस से हमारा भला ही होगा, तनिक सी भी बुराई न होगी। देश में गदर की जैसी प्रचण्ड तैयारी हुई थी उसे छिपाने की अब कुछ आवश्यकता नहीं जचती। मैं तो चाहता हू कि देशवासियों को उस का रत्ती रत्ती भर हाल मालूम हो जाय। मेरी पुस्तक समाप्त होने पर देशवासियों को मालूम होगा कि गदर की तैयारी इने गिने लडकों और नवयुवकों के मन की लहर ही न थी, अथवा इस की तैयारी कुछ ऐसे अन्यवस्थित रूप में न हुई थी जैसा कि रौलट रिपोर्ट में प्रकट किया गया है। रौलट रिपोर्ट तो इस दृष्टि से लिखी गई है जिस से कि भारतवासियों को आत्म शक्ति पर विश्वास न होने पावे और उस में घटनाओं का वर्णन इस ढग पर किया गया है जिस से कि दमन नीति को सहायता मिले। इस रिपोर्ट में बहुत सी बातें बढा कर लिखी गई हैं, किन्तु इन में यह बढावा बिलकुल तुच्छ विषयों को दिया गया है और यह काम इस ढग से किया गया है जिस मे कि विप्लववादी लोग देशवासियों की नजर में हास्यास्पद जँचें। फिर ऐसी खास खास बातें बडी सफाई से दबा दी गई हैं कि जिन के प्रकट होने से देशवासियों के मन में आशा का सञ्चार हो सकता है। रौलट रिपोर्ट पढने से हर्गिज नहीं मालूम होसकता कि

कितने समय से, बड़ी सावधानी के साथ बहुत ही धीरे धीरे कितने रत्न किस प्रकार इकट्ठे किये गये थे, फिर कितने दु:खों और कष्टों के बीच होकर कितने भीतरी बाहरी निर्यातनों की कसौटी से जाँच कर के, कितनी नीरव वीरताओं की महिमा से मण्डित हो कर इन रत्नों की माला गूँथी गई थी। मुझे तो इसी बात का दु:ख है कि उन सारी बातों को उपयुक्त रूप मे प्रकट करने योग्य शक्ति मुझ में नहीं है, तथापि जैसा मुझ से बनता है, करता हूँ।

बहुत लोग यह सोचेंगे कि इस प्रकार सारी बातें प्रकट कर देने से (मानो ये बातें अभी तक गुप्त हैं!) सरकारी पक्ष को दमन-नीति का प्रयोग करने के लिए मौका दिया जायगा। किन्तु इस के उत्तर में मुझे यही कहना है कि बलवे की जो आग एक दिन सिर्फ बङ्गाल के एक प्रान्त की सीमा के ही भीतर थी उसी की अग्निशिखा, १६-१७ वर्ष की दमननीति का ईंधन पा कर, रावलपिण्डी और पेशावर तक फैल गई थी, अतएव जो लोग इस दमननीति की जड उखाडना चाहते हों उन से मेरा यही वक्तव्य है कि विगत युग के बलवे की तैयारी के प्रयत्न को मजाक मे उडा कर नाचीज कहने या उस के अस्तित्व को ही अस्वीकार करने की कृपा न कीजिए, प्रत्युत सरकार को भली भाति समझा दीजिए कि देश की सच्ची आकाँक्षा को दबाने का उद्योग करने से, अथवा वैध आन्दोलन का विकास होने के लिए मौका और समय न देने से, इस प्रकार गुप्त-प्रलयाग्नि का उत्पन्न होना अनिवार्य है। वैध ,प्रकाश्य आन्दोलन की अपेक्षा छिप कर बलवे का उद्योग करना कम शक्तिशाली नहीं जान पडता। इँग्लैंड मे प्रकाश्य आन्दोलन करने का सुभीता रहने

कारण—फिर वह आन्दोलन कितना ही उग्र क्यों न हो—वहाँ गुप्त रूप से चलने का उद्योग उतने ही परिमाण में नहीं किया जाता जितने परिमाण में कि फ्रांस अथवा यूरप के अन्यान्य देशों में किया जाता है। मरणोन्मुख जाति ही दमनास्त्र से वश में कर ली जाती है किन्तु विकाशोन्मुख जाति के आत्मप्रकाश करने के उपायों को किसी भी दमनास्त्र द्वारा व्यर्थ नहीं किया जा सकता। आज यह बात क्या सरकार और क्या भारत की जनता, सभी को अच्छी तरह जाननी चाहिए।

यतीन्द्र बाबू अब इस लोक में नहीं हैं, इसी से उन की बात प्रकट करने में मैंने सङ्कोच नहीं किया। शायद हमारे देशवासियों को ठीक ठीक मालूम नहीं कि इस समय हम लोग सारे उत्तरी भारत में एक दिल से और एक ही उद्देश्य के लिए काम कर रहे थे, और शायद बङ्गाल के विप्लवकारी दलों को भी इस का सोलहों आने पता न था।

यतीन्द्र बाबू का विशेष रूप से अनुरोध था कि इस बलवे के लिए निर्धारित दिन इतना पीछे हटा दिया जाय जिस से कि बङ्गाल में पहुँचने पर उन्हें कम से कम दो महीने का समय मिले और इस बीच वे कुछ रुपये पैसे भी एकत्र कर सकें। उन्होंने बार बार कहा कि बिना हाथ में काफी पूँजी लिए इस काम में कूदना ठीक नहीं, किन्तु उन की इस 'काफी' की धारणा की सीमा बड़ी लम्बी चौड़ी थी। उतने अपरिमित द्रव्य का थोड़े समय में संग्रह किया जाना भी असाध्य काम था, इस बात को अन्त में यतीन्द्र बाबू ने स्वीकार कर लिया था किन्तु इस ओर की दशा को वे ठीक ठीक समझ न सकते थे। उस समय पंजाब के सिपाही बहुत ही अधीर

हो रहे थे। इस का एक कारण यह अनिश्चय था कि वे न जाने किस दिन पश्चिम के रणक्षेत्र मे भेज दिये जायँ, इस के सिवा भारत के विभिन्न सैनिक-दलों को भी लगातार एक छोर के स्थान से दूसरे छोर के स्थान में बदल कर भेज दिया जाता था। इसी लिए, अनुकूल दशा में न रहने दिये जाने पर, यदि उन सैनिकों को सुदूर दक्षिण की किसी -छावनी में भेज दिया जाय तब तो उन की सारी आशाओं पर पाला पड जायगा। ऐसे ही अनेक कारणो से पजाब के सिपाहियो को शान्त रखना जिस प्रकार दुरूह कार्य हो गया था उसी प्रकार हमे भी यह बडा खटका था कि चलने के लिए प्रस्तुत किये गये सैनिक कहीं अन्यत्र न भेज दिये जाँय। इन कारणो से हम लोग यतीन्द्र बाबू के अनुरोध को न मान सके। हम लोग भी कुछ कुछ उद्विग्न हो गये थे कि ऐसा बढिया मौका किसी कारण हाथ से न निकल जाय। इसी से एक ओर तो हम सिपाहिया को शान्त रखने का उद्योग कर रहे थे और दूसरी ओर ऐसी तैयारी में लगे हुए थे जिस से कि देश भर में एक-जी होकर कुछ कर दिखाया जाय, साथ ही यह भी ध्यान रक्खा गया था कि इस काम मे वृथा विलम्ब न होने पावे। यतीन्द्र बाबू से भी ये सारी बातें समझा कर कही गई और लाचारो मे उन लोगों को भी हमारे साथ ही साथ समान भाव से कदम बढाना पडा।

हम बहुत दिनों से यह समझते थे कि अनपढ जनता को उभाड देना कुछ कठिन काम नहीं है, इस के साथ साथ हम यह भी जानते थे कि जनता को सिर्फ भडका देने से ही हमारी विशेष रूप से कार्य सिद्धि होने की आशा नहीं। इसी से हम ने

इस कार्य की ओर विशेष रूप से ध्यान नहीं दिया था। हम लोगों का विचार था कि पहले देश के शिक्षित युवकों को सम्मिलित करके देशव्यापी एक विराट् संघ का सङ्गठन कर लिया जाय और फिर यदि देशी फौजों को अपने भाव की दीक्षा दे दी जा सके तभी चलने की नींव पक्की होगी, किन्तु इस तैयारी के साथ साथ हम लोगों ने विदेशियों से कुछ भी सम्पर्क नहीं रक्खा,—मगर गदर के उद्योग में यही बड़ी भारी भूल थी। कई मर्तबा यह विचार भी हुआ था कि इस तैयारी के साथ साथ अधिक परिमाण में अस्त्र-शस्त्रों के मँगाने का भी बन्दोबस्त होना चाहिए किन्तु नेता लोग इस ओर से उदासीन थे। वे कहते थे कि वह समय अभी दूर है। किन्तु जब समय आया तब फिर न इस का बन्दोबस्त करने को समय रहा और न कोई जरिया ही मिला। सारे देश में तो नहीं, किन्तु बङ्गाल और पञ्जाब में युवकों का जो संघ बनाया गया था उस की व्यापकता कुछ कम न थी किन्तु इस संघ का विकास और परिणिति बङ्गाल में जैसा हुई थी वैसी और कहीं भी नहीं हुई। व्यक्ति के भीतरी गठन और कुछ समय-व्यापी साहचर्य के फल से यह संघशक्ति जैसी परिस्फुटित होती है वैसी और किसी तरह नहीं होती। यही कारण है कि सच्ची संघशक्ति बङ्गाल में ही गठित हुई थी, क्योंकि पञ्जाब में जो चलने की तैयारी हुई थी उस का कुछ बन्दोबस्त तो खास कर उन सिक्खों ने किया था जो कि अमेरिका प्रभृति देशों से लौट कर भारत में आए थे। इन विदेश से आये हुए सिक्खों के साथ देश का वैसा घना

हेल मेल न था। और भिन्न भिन्न व्यक्तियों के कुछ कालव्यापी साहचर्य से यह दल सङ्गठित भी नहीं हुआ था। देशवासी लोग भी उन की ओर से कुछ लापरवा थे, किन्तु अपने दल से बङ्गाल की जनता इतनी उदासीन नहीं थी। इस के सिवा जिन व्यक्तियों के सहयोग से सघ सङ्गठित होता है उन के मन और प्राणों में आदर्श की प्रेरणा जितनी गम्भीर होगी और उस आदर्श का ठाठ जितना ऊंचा बाँधा जायगा उसी परिमाण में सघ भी शक्तिशाली होगा। इस दृष्टि से बङ्गाल के बाहर का कोई भी सघ बङ्गाल की सघशक्ति के जैसा शक्तिशाली न था,—बगाल में भिन्न भिन्न आदर्शों के घात प्रतिघात की क्रीडा जैसे अभिनव रूप मे देख पडी वैसी बगाल के बाहर देखने में नहीं आई। हमारी इस बळवे की तैयारी के साथ भारत के जातीय जागरण का भिन्न भिन्न ओर से क्या सम्बन्ध था और विप्लववादियों के व्यक्तिगत जीवन में वह किस प्रकार प्रतिफलित हुआ था—इस की चर्चा वहाँ होगी जहाँ बगाल का वर्णन किया जायगा। इस का प्रधान कारण यह है कि उस आदर्श के द्वन्द्व का जैसा अनुभव मुझे बङ्गाल मे हुआ है वैसा अन्यत्र नहीं हुआ, और यहाँ तो मैं मुख्यरूप से बङ्गाल के बाहरी प्रदेश के आन्दोलन का वर्णन कर रहा हूँ। बङ्गाल के बाहर तो हम लोग प्रधानतया बलवे की तैयारी की मामूली बातो में ही लगे हुए थे किन्तु बङ्गाल में मानो भारत के वास्तविक जातीय जागरण के लिए क्या धर्म क्या कर्म क्या साहित्य और सामाजिक आचार विचार सभी कामों में हम लोग लिप्त थे।

अन्यान्य प्रदेश वालो को जिस प्रकार फौजों मे भर्ती होने का सुभीता रहता आया है वैसा सुभीता यदि बगाल मे बगालियो को होता तो यहाँ न जाने कब का गदर मच गया होता किन्तु वर्तमान समय मे, पजाब मे जिस फुर्ती से बलवे की तैयारी हो रही थी उस को देखते हुए हम लोग सोचते थे कि बगाल न जाने इस समय किस प्रकार बलवे मे शामिल होगा। बगाल के पिछले युग के कलङ्क का स्मरण होने से मेरे मन मे बडा कष्ट होता था। यही कारण था कि बगाल मे जाकर काम करने की इच्छा होती थी। इस से यतीन्द्र बाबू वगैरह जब बगाल को वापिस चले गये तब वहाँ जाने के लिए मैं विशेष रूप से उत्सुक हुआ, किन्तु दादा इस के लिए किसी प्रकार राजी न हुए। उन्होंने कहा वे तो स्वय पजाब जाँयगे और मुझे बगाल और पजाब के मध्यदेश में रह कर उक्त दोनो प्रदेशो की कार्रवाई का सिलसिला जोडे रखना होगा। इस से मन मार कर मुझे काशी में ही रहना पडा।

इसी समय बगाल में मोटर-डकैती का आरम्भ हुआ और थोडे ही समय मे कई जगह डाके डाले जाकर बहुत सा धन सग्रह किया गया। इन घटनाओ के कुछ ही दिन पहले रोडा कम्पनी के यहाँ से ५० मोजर पिस्तौलें और ५० हजार के लगभग टोटो की चोरी हो गई। अब तक बगाल में बलवे की तैयारी का कार्यक्रम दो एक दलो मे ही आबद्ध था। यतीन्द्र बाबू थे तो खासे कार्यकुशल किन्तु अब तक कुछ कुछ खाली रहते थे। इस से अन्यान्य दलो का कुछ भी काम काज न होता था। इस बार यतीन्द्र बाबू के पूर्ण उद्यम से काम में जुटते ही

पेशाल मे बडे सपाटे से काम काज होने लगा। उन के इस नये आत्म प्रकाश को देख कर हम लोगो को बडा अचरज हुआ।

इधर रासबिहारी भी पजाब को रवाना हुए। उन्हें गिरफ्तार करा देने वाले को साढे सात हजार रुपये का इनाम बोला गया था। रासबिहारी को गिरफ्तार न कर सकने के कारण सरकारी पक्ष की कार्य-कुशलता मे बट्टा लग गया था और उन्हें गिरफ्तार करने के लिए भारत सरकार ने कुछ उठा न रक्खा था। एक ओर तो वह प्रबल प्रतापशाली ब्रिटिश राजशक्ति थी जिस के कि अपार धन-बल और लोकबल है, जो इतने बडे सुनियन्त्रित राज्य की चालक है, देश के एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक जिस का अद्भुत सगठन (Organisation) है, और जिस के जासूस विभाग की होशियारी की तुलना रूस के सिवा एशिया में किसी से भी नहीं हो सकती, और दूसरी ओर था भारत का दरिद्र विप्लव दल—इतना दरिद्र कि एक दिन रासबिहारी ने हम लोगो से कहा कि 'मुझे अँगरेजो के हवाले कर के साढे सात हजार रुपये वसूल कर लो'—और जिस के साथ देशवासियों की आन्तरिक सहानुभूति तो थी किन्तु वे डर के मारे किसी भी तरह सहायता करने को तैयार न थे, तथा जिस दल के नेता समाज में बिलकुल ही अपरिचित थे, सौ बात की एक बात यह कि लोग बिलकुल ही असहाय थे, जिन का बल और भरोसा था केवल मात्र अपना असीम विश्वास तथा चित्त की अद्भुत दृढता और अपने घर में ही जिन की उपेक्षा स्वदेशवासी करते थे,—ऐसे दो दलो के असम द्वन्द्व में विप्लव दल ने बहुत

दिनों तक केवल आत्मरक्षा ही नहीं की थी, बल्कि उस ने अंगरेज सरकार को भी कितने ही नाच नचा दिये थे, और इस प्रकार प्रबल अँगरेज शक्ति जो रासबिहारी को गिरफ्तार नहीं कर सकी इस का प्रधान कारण था हमारे संघ की व्यापकता और बहुत बढ़िया बन्दोबस्त। उपर्युक्त शक्तिशाली सुनियन्त्रित संघ न होता तो रासबिहारी का बचा लेना कदापि सम्भव न था। इस में सन्देह नहीं कि इतने पर भी रासबिहारी की कुशलता और उन का भाग्य कुछ कम सहायक नहीं हुआ। कितने ही भीषण सङ्कट के अवसरों पर उन्हें सहज ही छुटकारा मिल गया था। अब उन बातों के मालूम होने से देह में रोमाञ्च हो आता है। इसे भगवान की विशेष कृपा के सिवा और क्या कहा जाय। इन सब बातों का वर्णन दूसरे भाग में होगा। एक रासबिहारी ही इस प्रकार अपने को छिपाने में सफल न हुए थे, बल्कि और भी कितने ही युवक इसी समय से तथा इस के पीछे में भी प्रबल प्रतिद्वन्द्वी की सारी शक्ति को व्यर्थ करके तीन चार वर्ष तक—और कोई कोई तो इस से भी अधिक समय तक—छिपे रहने में समर्थ हुए थे। यदि इन भागे हुए लोगों का रहस्य पूर्ण इतिहास लिखा जाय तो भारत के साहित्य को एक नई सम्पत्ति प्राप्त हो।

रासबिहारी रात की गाडी से दिल्ली होते हुए पंजाब को रवाना हुए। इस समय से प्राय हर वक्त हम लोगों में से कोई न कोई रासबिहारी के साथ साथ रहता था। दिल्ली पहुँचने तक कोई खास घटना नहीं हुई। गाडी जिस समय दिल्ली स्टेशन को पीछे छोड कर आगे बढ़ने लगी उस समय रासबिहारी ने अक-

घड्डाल मे वडे सपाटे से काम काज होने लगा। उन के इस नये आत्म प्रकाश को देख कर हम लोगों को बडा अचरज हुआ।

इधर रासविहारी भी पजाव को रवाना हुए। उन्हे गिरफ्तार करा देने वाले को साढे सात हजार रुपये का इनाम वोला गया था। रासविहारी को गिरफ्तार न कर सकने के कारण सरकारी पक्ष की कार्य-कुशलता में वट्टा लग गया था और उन्हें गिरफ्तार करने के लिए भारत सरकार ने कुछ उठा न रक्खा था। एक ओर तो वह प्रवल प्रतापशाली ब्रिटिश राजशक्ति थी जिस के कि अपार धन-वल और लोकवल है, जो इतने वडे सुनियन्त्रित राज्य की चालक है, देश के एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक जिस का अद्भुत सगठन (Organisation) है, और जिस के जासूस विभाग की होशियारी की तुलना रूस के सिवा एशिया में किसी से भी नहीं हो सकती, और दूसरी ओर था भारत का दरिद्र विप्लव दल—इतना दरिद्र कि एक दिन रासविहारी ने हम लोगों से कहा कि 'मुझे अँगरेजो के हवाले कर के साढे सात हजार रुपये वसूल कर लो'—और जिस के साथ देशवासियों की आन्तरिक सहानुभूति तो थी किन्तु वे डर के मारे किसी भी तरह सहायता करने को तैयार न थे, तथा जिस दल के नेता समाज में बिलकुल ही अपरिचित थे, सौ वात की एक वात यह कि लोग बिलकुल ही असहाय थे, जिन का वल और भरोसा था केवल मात्र अपना असीम विश्वास तथा चित्त की अद्भुत दृढता और अपने घर में ही जिन की उपेक्षा स्वदेशवासी करते थे,—ऐसे दो दलों के असम द्वन्द्व में विप्लव दल ने बहुत

स्मात् देखा कि उन के छोटे से डब्बे में उन्हीं की पहचान का खुफिया पुलिस का दरोगा बैठा हुआ है। उस समय रासविहारी के मन की जो दशा हुई होगी उस को हमें कल्पना से ही जान लेना चाहिए। जो हो, सौभाग्य से उस रात को वे अपने सिर पर टोपी लगाए रहने की बदौलत साफ बच गए और अगला स्टेशन आने पर वे उस डब्बे से उतर कर दूसरे डब्बे में जा बैठे किन्तु गये वे उसी गाडी से। इसी से समझ लीजिए कि उन में कितना हियाव था। इस प्रकार बडी शान्ति से किन्तु दृढता के साथ रासविहारी सब बातों को जानते रहने पर भी दहकती हुई आग में कूद पडे। वे अमृतसर पहुँच गये।

इधर युक्त प्रदेश बिहार और बङ्गाल की भिन्न भिन्न छावनियों में हमारे मनुष्यों ने आना जाना आरम्भ कर दिया। थोडे ही दिनों में पंजाब से कर्तारसिंह तथा और भी कई सिक्ख पंजाब का समाचार लेकर काशी आये। उस समय उत्तर भारत की तमाम छावनियों का हाल हम ने मालूम कर लिया था। सब स्थानों का समाचार मिलने पर समझ में आ गया था कि उस समय देश भर में गोरी सेना बहुत ही थोडी सी थी और जितने गोरे थे भी वे निरे रंगरूट थे। टेरीटोरियल सेना के छोकरों और दुबले पतले लम्बे से नौजवान सिपाहियों को देख कर हम लोग चाहते थे कि अब बहुत जल्द हमें शक्ति की जाँच करने का मौका मिल जाय। उन दिनों समूचे उत्तर भारत की दो तीन बडी बडी छावनियों और काबुल के सीमान्त देश के सिवा कहीं भी ३०० से अधिक गोरे सिपाही न थे। बडी बडी छावनियों में भी इन की तादाद एक और दो हजार के बीच में थी। भिन्नभिन्न

छावनियों में जितने अस्त्र शस्त्र थे उन की सहायता से कम से कम वर्ष भर तक तो मजे से युद्ध जारी रक्खा जा सकता था। हम लोगों ने उन सब बातों का रत्ती रत्ती पता लगा लिया था जिन का कि लग सकता था। जैसे—किस रेजीमेंट में कितने बाक्स राईफल्ज़ हैं, कारतूसों के कितने बाक्स हैं, मेगजीन पर किन का पहरा रहता है और कैसा पहरा रहता है, इत्यादि। हिन्दुस्तानी फौजों की मानसिक दशा उस समय बहुत ही खराब थी। उन्हें हर घड़ी पर यह खटका बना रहता था कि बस अब यूरप जाने का हुक्म होता ही है। जो दम गुजरता था गनीमत समझा जाता था। छावनियों में पहुचते ही हमारे युवकों का सिपाही लोग बड़ा आदर सत्कार करते और बड़े आग्रह से उन की बातें सुनते थे, एकबार एक युवक किसी छावनी में गया। तब उसी दिन, रात को वहां के सिपाहियों की बैठक हुई। उस बैठक में बड़े ओहदेदारों के सिवा और सभी सिपाही एकत्र हुए, उस विदेश से आये हुए युवक की बातें उन लोगों ने बड़े आग्रह से सुनीं। अन्त में कहा कि इस लड़ने में हम लोग अगुआ न बनेंगे, हाँ हम लोग ऐसा जरूर करेंगे जिस में बल्वे के समय हमारे हाथ से मैगजीन न निकल जाने पावे। और जब गदर सचमुच मच जायगा तब हम भी शामिल हो जायँगे।

काशी की रेजीमेंट में मैं और भी कई बार गया था। इस रेजीमेंट में दिल्लासिंह के सिवा और सभी अच्छे आदमी थे वे लोग सचमुच देश के भले के लिए लड़ने में शामिल होने को तैयार थे। दिल्लासिंह ने एक दिन हम लोगों से पूछा—'बाबू, देश के स्वाधीन हो जाने पर क्या हम लोगों को

जागीर या माफी वगैरह मिलेगी ? एक दिन गन काटन ले जाकर उसे हम लोगों ने अपनी करामात दिखलाई और कहा कि देखो यह मामूली रुई नहीं है इस में आग छूते ही किस प्रकार भक से तमाम जल उठती है तनिक सी भी बाकी नहीं रहती । यह लीला देख कर वे लोग अचरज करते थे। इस प्रकार हम लोग कई तरह से विझासिंह और उस के अनुचरों को अपने मत मे लाने की कोशिश करते थे। इस रेजीमेंट के कुछ आदमियों से पीछे मेरी भेंट हुई । उन्हो ने बडे भक्ति भाव से माथा झुका कर मुझसे बात चीत की थी। इनमें एक सिपाही की उम्र ५० से ऊपर थी। उस ने मुझ से कहा-- बाबू मेरे साथ के जान पहचान वाले अब कोई भी जीवित नहीं। एक मैं ही रह गया हूँ। सो मेरा समय नजदीक है। बाबू अब मैं मौत से नहीं डरता, तुम्हीं मेरे गुरु होगये, क्योकि दुनिया के झमेलो से मेरे चित्त को हटा कर तुम्हीं ने भगवान् की ओर कर दिया है।

कितनी ही रेजीमेंटो मे हमारी पहुँच हो चुकने पर उन की अन्य स्थानो में बदली होगई। इस से यह लाभ हुआ कि हमारे कार्य का प्रचार देश में बहुत दूर तक होगया।

रेजीमेंटो मे प्रचार करने के अलावा इसी समय हम ने देहात मे जाकर वहाँ की जनता में भी रसाई करने की कोशिश की। युक्त प्रदेश मे कुछ ऐसे गाँव हैं जहाँ निरे ठाकुरो की बस्ती है। ऐसे अनेक केन्द्रों से अँगरेजों की फौजो के लिए रँगरूट चुने जाते थे । युक्त प्रदेश और पंजाब के अनपढ लोग बंगाल की अशिक्षित जनता की भाँति नहीं है । एक तो ये बंगालियों

की अपेक्षा शरीर से बहुत कुछ बलवान हैं, दूसरे अपने पुराने गर्व का स्मरण इन में अब तक यथेष्ट परिमाण में बना है। ये अनपढ़ हैं सही किन्तु राजनैतिक संस्कार इनमें अत्यन्त प्रबल हैं। बंगाल की जनता और शिक्षित सम्प्रदाय की भी अपेक्षा यहां वालों में अपने धर्म पर बहुत अधिक प्रीति और मोह है। सुयोग्य नेता की अधीनता में परिचालित किये जाने से ये अशिक्षित लोग एक बार असम्भव को भी सम्भव कर सकते हैं।

इन लोगों में भी हमारा आवागमन होने लगा था और इन लोगों से भी हम को कुछ कम आशाजनक उत्तर न मिला था।

इधर रासविहारी भी पंजाब में सैनिकों से भेंट मुलाकात करने लगे। वे जिस मकान में रहते थे उस में किसी से भी भेंट न करते थे। दूसरों से मिलने जुलने के लिए दो तीन मकान बिलकुल अलग थे। सिपाहियों से वे ऐसे ही एक अलग मकान में मिला करते थे। इस समय के लाहौर के दो सैनिकों का जो हाल मैंने सुना है वह सदा स्मरण रखने योग्य है। एक का नाम लछमनसिंह था। दूसरा सिपाही मुसलमान था। उस का नाम मुझे याद नहीं। ये दोनों ही हवलदार थे। सिपाहियों पर लछमनसिंह का खासा प्रभाव था। इस रेजीमेन्ट के एक सिपाही से अन्दमान में मेरी बात चीत हुई थी। उस से पता चला कि लछमनसिंह ने बहुत पहले से अपनी रेजीमेन्ट में एक छोटा सा दल बना रक्खा था। वे बीच बीच में अक्सर एकत्र होते थे। उस समय सिक्ख धर्म सम्बन्धी पुस्तकें पढ़ी जातीं और अन्यान्य विषयों पर चर्चा इत्यादि होती थी। कई बार इस की खबर पाकर रेजीमेंट के अंगरेज़ हाकिम इस मामले को दबाने का प्रयत्न किया

जागीर या माफी वगैरह मिलेगी ? एक दिन गन काटन ले जाकर उसे हम लोगों ने अपनी करामात दिखलाई और कहा कि देखो यह मामूली रुई नहीं है इस में आग छूते ही किस प्रकार भक से तमाम जल उठती है तनिक सी भी बाकी नहीं रहती । यह लीला देख कर वे लोग अचरज करते थे। इस प्रकार हम लोग कई तरह से दिलासिंह और उस के अनुचरों को अपने मत मे लाने की कोशिश करते थे। इस रेजीमेंट के कुछ आदमियों से पीछे मेरी भेंट हुई । उन्हों ने बड़े भक्ति भाव से माथा झुका कर मुझसे बात चीत की थी। इनमें एक सिपाही की उम्र ५० से उपर थी। उस ने मुझ से कहा--बाबू मेरे साथ के जान पहचान वाले अब कोई भी जीवित नहीं। एक मैं ही रह गया हूँ। सो मेरा समय नज़दीक है। बाबू अब मैं मौत से नहीं डरता, तुम्हीं मेरे गुरु होगये, क्योंकि दुनिया के झमेलो से मेरे चित्त को हटा कर तुम्हीं ने भगवान् की ओर कर दिया है।

कितनी ही रेजीमेंटो मे हमारी पहुँच हो चुकने पर उन की अन्य स्थानो में बदली होगई। इस से यह लाभ हुआ कि हमारे कार्य का प्रचार देश में बहुत दूर तक होगया।

रेजीमेंटो मे प्रचार करने के अलावा इसी समय हम ने देहात मे जाकर वहाँ की जनता में भी रसाई करने की कोशिश की। युक्त प्रदेश मे कुछ ऐसे गाँव हैं जहाँ निरे ठाकुरो की बस्ती है। ऐसे अनेक केन्द्रों से अँगरेजो की फौजो के लिए रँगरूट चुने जाते थे । युक्त प्रदेश और पंजाब के अनपढ़ लोग बंगाल का अशिक्षित जनता की भाँति नहीं है। एक तो ये बंगालियों

की अपेक्षा शरीर से बहुत कुछ बलवान हैं, दूसरे अपने पराने गर्व का स्मरण इन मे अब तक यथेष्ट परिमाण में बना है। ये अनपढ हैं सही किन्तु राजनैतिक संस्कार इनमें अत्यन्त प्रवल हैं। बगाल की जनता और शिक्षित सम्प्रदाय की भी अपेक्षा यहा वालों में अपने धर्म पर बहुत अधिक प्रीति और मोह है। सुयोग्य नेता की अधीनता मे परिचालित किये जाने मे ये अशिक्षित लोग एक बार असम्भव को भी सम्भव कर सकते हैं।

इन लोगों में भी हमारा आवागमन होने लगा था और इन लोगों से भी हम को कुछ कम आशाजनक उत्तर न मिला था।

इधर रासविहारी भी पजाब में सैनिकों से मेल मुलाकात करने लगे। वे जिस मकान मे रहते थे उस में किसी से भी भेंट न करते थे। दूसरा से मिलने जुलने के लिए दो तीन मकान बिलकुल अलग थे। सिपाहियों से वे ऐसे ही एक अलग मकान में मिला करते थे। इस समय के लाहौर के दो सैनिकों का जो हाल मैंने सुना है वह सदा स्मरण रखने योग्य है। एक का नाम लछमनसिंह था। दूसरा सिपाही मुसलमान था। उस का नाम मुझे याद नहीं। ये दोनों ही हवलदार थे। सिपाहियों पर लछमनसिंह का खासा प्रभाव था। इस रेजीमेन्ट के एक सिपाही से अन्दमान मे मेरी बात चीत हुई थी। उस से पता चला कि लछमनसिंह ने बहुत पहले से अपनी रेजीमेन्ट में एक छोटा सा दल बना रक्खा था। वे बीच बीच में अक्सर एकत्र होते थे। उस समय सिक्ख धर्म सम्बन्धी पुस्तकें पढ़ी जातीं और अनेक विषयों पर चर्चा इत्यादि होतीं थीं। कई बार इस की खबर ५। रेजीमेंट के अगरेज हाकिम इस मामले को रोकने का हुक्म

करते थे । इस प्रकार बीच बीच में बन्द हो कर भी वह कार्य छोटे रूप में कई वर्ष से लगातार होता चला आ रहा था। रेजीमेंट मे सभी लोग लछमनसिंह को बडा धर्मात्मा और उन्नत-चरित का पुरुष समझते थे। लछमनसिंह को फासी का हुक्म हो चुकने पर जब मुसलमान हवलदार की जान बख्श देने का लालच दे कर कुछ गुप्त बातो की टोह लेने की कोशिश की गई और कहा गया कि तुम एक काफिर के साथ साथ फासी पर चढना कैसे पसन्द करोगे, तब मुसलमान हवलदार ने बडा बढिया उत्तर दिया। उस ने कहा—'अगर मैं लछमनसिंह के साथ साथ फासी पर टागा जाऊ तो मुझे बहिश्त मिले"। इस को भी फाँसी होगई।

बलवे का निर्दिष्ट दिन जितना ही समीप आने लगा उतना ही हम लोगो को खटका होने लगा। कि "क्या हम लोग पार पा जायँगे! इतनी बडी जिम्मेवारी को क्या हम लोग ले सकेंगे? बलवे के लिए जैसी तैयारी करने की तरकीब हमे सूझ पडती थी उस में तो हम लोगो ने कोई कसर रक्खी नहीं किन्तु फिर भी उस बहुत जल्द आने वाले दिन का विचार करने से ही शरीर थर्रा जाता था। पजाब जाने से पहले दादा भी कई बार यही बात कह चुके थे।

असल मे हम लोग यह चाहते थे कि एक दिन एकाएक—विना ही किसी को अपनी इच्छा बतलाये—उत्तर भारत की छावनियों में तमाम अँगरेज सैनिको पर, एक ही दिन और ठीक एक ही समय, एक दम हमला कर दिया जाय और उस रेल पेल के वक्त जो लोग हमारी शरण में आ जायें उन्हें कैद कर लिया

जाय। बलवा रात के वक्त शुरू कर दिया जाय और उसी दम शहर के तार इत्यादि काट कर अँगरेज वालण्टियरों तथा तगड़े पुरुषों को कैद में डाल दिया जाय और फिर खजाना लूट कर के जेल से कैदी रिहा कर दिए जाँय। इसके पश्चात् उस शहर का इन्तिजाम अपने चुने हुये किसी योग्य पुरुष को सौंप कर तमाम बलवाइयों का दल पञ्जाब में जा कर एकत्र हो। हम लोग यह न समझ बैठे थे कि गदर मचने पर अन्त तक अँगरेजों के साथ सम्मुख युद्ध में हमारी विजय होती जायगी। किन्तु हमें पक्का भरोसा था कि उल्लिखित रीति के अनुसार एक बार जहाँ गदर मचा तहाँ अन्तर्जातीय एक ऐसी विचित्र दशा उपस्थित हो जायगी कि यदि कम से कम वर्ष भर तक हम इस युद्ध को ठीक ढँग पर जारी रख सके तो विदेशों की भिन्न भिन्न जातियों के आपसी विद्वेष के फल से और अँगरेजों के शत्रुओं की सहायता से, देश को स्वाधीन कर देना हमारे लिए अत्यन्त कठिन होने पर भी असम्भव न होगा।

एक दिन पञ्जाब से यह समाचार लेकर कुछ आदमी आये कि बलवे का मुहूर्त पक्का कर लिया गया है। २१ फरवरी को बलवा मचा दिया जायगा। काम रात को ही आरम्भ होगा। इतवार को मुझे यह सूचना मिली थी। लहमे भर में तीव्र आवेग से देह और मन न जाने कैसे भाव से कम्पित हो उठे। वह ऐसा विचित्र भाव था जिस का कभी अनुभव नहीं हुआ। न वह आनन्द कहा जा सकता है और न आशङ्का ही। बलवे का आरम्भ होने के लिए अब एक हफ्ते भर की देर थी। अपने अन्यान्य स्थानों को भी बलवे की तारीख की सूचना दे दी गई।

पूर्व पराठ वाले उसे दुनिया के झगड़ों से छुड़ाये बिना कभी न मानते। जो हो पीछे मे पता चला कि धरने के लिए जो दिन मुकर्र किया गया था उसकी खबर पुलिस को लग चुकी है, क्यों कि कृपालसिंह से यह दिन छिपाया नहीं गया था। अतएव निश्चय हुआ कि कृपालसिंह अब घर से बाहर न जाने पावे और धरने की तारीख २१ फरवरी के बदले १९ फरवरी—यानी दो दिन पहले—कर दी गई। किन्तु अभाग्य से हो या होनहार के कारण हो,—कुछ भी कहिए—इस नई तारीख की सूचना छावनी में दे आने का काम जिन्हें सौंपा गया था उन्हों ने उक्त सवाद छावनी में पहुँचा कर जब रासबिहारी से कहा "छावनी में १९ फरवरी की इत्तिला दे आया" तब कृपालसिंह वहीं बैठा हुआ था। कृपालसिंह का हाल सब लोगों को मालूम न था। शायद यह घटना १८ फरवरी की है। उसी दिन दोपहर के समय जब भोजन करने के लिए सब लोग इधर उधर चले गये तब कृपालसिंह ने वहाँ से टरक जाना चाहा। किन्तु उस पर नजर रखने के लिए जिनकी नियुक्ति कर दी गई थीं उन्हो ने उसका हाथ पकड कर खींच तान नहीं की, बल्कि हर वक्त उस के साथ बने रहे। कृपालसिंह ने मकान के बाहर आते ही देखा कि भेदिया पुलिस का एक आदमी साइकल पर बैठ उसी ओर आ रहा है। उससे कृपालसिंह की मुलाकात होते ही १९ फरवरी की इत्तला पुलिस को मिल गई और इसके कुछ घण्टे बाद धर पकड शुरू हो गई। जिस मकान मे कृपालसिंह था उस में ७-८ गिरफ्तारियाँ हुईं। इस मे कुछ मुखिया भी थे। जिस मकान में रासबिहारी रहते थे उस का पता दो एक मुखियों के

देर है, यह कह कर वे फिर अपनी गुफा में चले गये। भगवान् का अभिप्राय हर वक्त ठीक ठीक समझ में नहीं आता। हजारों वर्ष से भारत का सारा पुरुषार्थ जिस तरह बार बार व्यर्थ होता रहा है उसी तरह इस बार भी समग्र उत्तर भारत की वलवे की इतनी वडी इमारत भरभरा कर गिर पडी। कुसुमकली को खिलने के पहले ही मानो वृन्त से तोड कर देवता की पूजा में चढा दिया गया। सुनिए यह क्यों कर हुआ।

पजाब के खुफिया पुलिस महकमे के एक मुसलमान डेपुटी सुपरिंटेंडेंट ने कृपालसिंह नाम के एक सिक्ख को विप्लव दल में भर्ती करा दिया। यह उक्त अफसर का जासूस था। रिश्ते में कृपालसिंह का एक भाई होता था जो कि अगरेजों की फौज में नौकर था और इस दल में भी शामिल था। प्रधानतया इसी सैनिक की सहायता से कृपालसिंह का सम्भवत फरवरी महीने में इस दल मे प्रवेश हुआ था। किन्तु इस के कुछ ही दिन बाद कृपालसिंह की गतिविधि पर बहुत लोगो का सन्देह हो गया। तब कुछ नेताओं की सलाह हुई कि उस पर हर दम नजर रहनी चाहिए। इस का फल यह हुआ कि दो चार दिन में ही इस का पुलिस के हाकिमो के पास प्रति दिन एक निर्धारित समय पर आना जाना देख लिया गया। इधर वलवे का झण्डा खडा करने को दो चार दिन की देर रह गई थी। इस लिए सोचा गया कि इस दशा में यदि इसे दुनिया से हटा दिया जाय तो ऐसी विकट गडबड मच सकती है जिस से कि शायद हमारे अन्तिम मनोरथ की सिद्धि में वेढब विघ्न आ पडे। इसी आशङ्का के मारे इस काटे को निकालने का कुछ भी उद्योग नहीं किया गया। ऐसी दशा में

पूर्व नख्शाल वाले उसे दुनिया के झगड़ों से छुड़ाये बिना कभी न मानते। जो हो, पीछे से पता चला कि बलवे के लिए जो दिन मुकर्रर किया गया था उसकी खबर पुलिस को लग चुकी है, क्यों कि कृपालसिंह से वह दिन छिपाया नहीं गया था। अतएव निश्चय हुआ कि कृपालसिंह अब घर से बाहर न जाने पावे और बलवे की तारीख २१ फरवरी के बदले १९ फरवरी–यानी दो दिन पहले–कर दी गई। किन्तु अभाग्य से हो या होनहार के कारण हो,—कुछ भी कहिए—इस नई तारीख की सूचना छावनी में दे आने का काम जिन्हें सौंपा गया था उन्हों ने उक्त सवाद छावनी में पहुँचा कर जब रासबिहारी से कहा "छावनी में १९ फरवरी की इत्तिला दे आया" तब कृपालसिंह वहीं बैठा हुआ था। कृपालसिंह का हाल सब लोगों को मालूम न था। शायद यह घटना १८ फरवरी की है। उसी दिन दोपहर के समय जब भोजन करने के लिए सब लोग इधर उधर चले गये तब कृपालसिंह ने वहाँ से टरक जाना चाहा। किन्तु उस पर नजर रखने के लिए जिनकी नियुक्ति कर दी गई थी उन्हों ने उसका हाथ पकड़ कर खींच तान नहीं की, बल्कि हर वक्त उस के साथ बने रहे। कृपालसिंह ने मकान के बाहर आते ही देखा कि भेदिया पुलिस का एक आदमी साइकल पर बैठ उसी ओर आ रहा है। उससे कृपालसिंह की मुलाकात होते ही १९ फरवरी की इत्तला पुलिस को मिल गई और इसके कुछ घण्टे बाद धर पकड़ शुरू हो गई। जिस मकान में कृपालसिंह था उस में ७–८ गिरफ्तारियाँ हुई। इन मे कुछ मुखिया भी थे। जिस मकान में रासबिहारी रहते थे उस का पता दो एक मुखियों के सिवा

और किसी को मालूम न था, क्यो कि जिन से मिलने-जुलने की जरूरत होती उन मे रासबिहारी अन्यान्य मकानो मे ही मिलते थे। इधर मैगजीन पर देशी सिपाहियों के बदले गोरों का पहरा होगया। शहर के अँगरेज वालण्टियर फौजी तैयारी से लैस कर दिये गये। उन सब को कैम्प बना कर रहने का हुक्म होगया। युद्ध के समय चौकन्ने होकर रहने की जिस प्रणाली को 'पिकेट'करना कहते है उस प्रणाली से गोरे सिपाही और वालण्टियर लोग पहरा देने लगे। हथियारबन्द गोरे सिपाहियों की टोलियाँ फौजी ढंग से बस्ती भर मे चक्कर लगाने लगीं। लाहौर, दिल्ली फिरोजपुर सभी जगह ऐसा ही हुआ। लोगों ने समझा कि इस फौजी तैयारी का कारण यूरोपीय युद्ध का कोई खटका होगा। देशी सिपाहियो के मन में घबराहट छा गई (उन्हीं के जो कि साजिश मे थे) इधर बलवे की तारीख दो दिन पहले कर देने से देहात के सब लोग अपने अपने निर्दिष्ट स्थानो मे एकत्र नहीं हो सके। सिर्फ कर्त्तारसिंह ७०—८० आदमियों के साथ फिरोजपुर की छावनी मे, जैसा कि पहले निश्चय हो चुका था, पहुच गये। उस समय वहाँ भी वही हाल था जैसा लाहौर में हो रहा था,—देशी सिपाहियों को हटा कर गोरो के अधिकार में मैगजीन दे दिया था, गोरे सिपाही बड़ी मुस्तैदी से पहरा दे रहे थे। किन्तु कर्त्तारसिंह को लाहौर की नई घटना का कोई समाचार नहीं मिला था।

[illegible] मे ऐसी चौकसी रहने पर भी कर्त्तारसिंह आकर [illegible] हवलदार से मिले। हवलदार ने कहा कि अब [illegible] कारगुजारी किये बिना हम लोग कुछ भी नहीं कर

सकते, क्योंकि ऐसी दशा में यदि कुछ किया जायगा तो सत्यानाश हो जायगा इस मे कर्त्तारसिंह ने समझ लिया कि इस बार अब कुछ होने की आशा नहीं। उन्होंने ताड लिया कि दो ही चार दिन में कैसी दशा हो जाने वाली है। उन्होंने कई तरह से सैनिकों को व्यर्थ समझाने का उद्योग किया कि यदि आज इसी दम कुछ न किया जायगा तो फिर और कुछ होने का नहीं, यही पहला और आखिरी मौका है। सिपाहियों ने अँगरेज पहरेदारों की ओर उँगली से इशारा कर के कहा कि इस समय कुछ कर गुजरने की कोशिश बिलकुल बेकार होगी। आँखों देखते भला मक्खी कैसी निगली जा सकती है, जान-बूझ कर कैसे आग मे कूदा जाय। उस दिन भारतवासियों के हाथ में यदि उपयुक्त परिमाण में अस्त्र शस्त्र होते तो ऐसा विश्वासघात हो जाने पर भी भारत में बलवा किसी के रोके रुक न सकता था। अथवा यदि पहले से ही शिक्षित और उपयुक्त मनुष्य बलवे की दीक्षा लेकर फौजो में भर्ती होते तो भी उस समय की बलवे की तैयारी व्यर्थ न जाती। उस दिन लाचार होकर कर्त्तारसिंह को खाली हाथ लौट जाना पड़ा। देहात के आदमी अपने अपने घर को चले गये। कर्त्तारसिंह लाहौर पहुँचे। अब सारे पजाब मे धडाधड गिरफ्तारियाँ होने लगीं। जो लोग पकडे जाते थे उन में से कोई कोई भण्डा फोड़ कर के और भी दस पाँच साथियो का नाम धाम प्रकट करने लगे। इस प्रकार कभी कभी गोरी फौज किसी गाँव को जा घेरती और तब बहुत से आदमी एक ही जगह गिरफ्तार कर लिये जाते। भारतीय सिपाहियो के मन में एक तरह की बेचैनी देख पड़ी। रावलपिण्डी की एक काली पलटन बरखास्त

कर दी गई। लाहौर मे जहाँ तहाँ खाना तलाशियाँ और गिरफ्तारियाँ होने लगीं। किसी सिक्ख पर जरा सा सन्देह होते ही उसे सीधा थाने मे पहुँचाया जाता था। इसी तरह पकड धकड होने में कभी कभी दोनो तरफ से गोली चल जाती थी। दो ही चार दिन में मामला इस तरह सङ्गीन हो गया, अब दल में परस्पर एक दूसरे पर विश्वास करना कठिन हो गया।—कर्त्तारसिंह बुद्धिमान् युवक थे। लाहौर आते ही वे सीधे रासबिहारी के डेरे पर पहुँचे और किसी भी स्थान पर नहीं गये। क्योंकि रासबिहारी वाले मकान को बहुत कम आदमी जानते थे, इसलिए वह सब से अधिक सुरक्षित था। उस समय रासबिहारी बडी उदासी से एक खाट पर मुर्दे की तरह पडे थे। कर्त्तारसिंह भी चुप चाप उन की बगल में पडी हुई एक खाट पर लेट रहे। थकावट के मारे उन का शरीर शिथिल हो रहा था। दोनों ही चुप थे। उन के उस म्लान मौन से बडी निदारुण मर्मस्थान की पीडा की बातें प्रकट होने लगीं। हम में से कितने लोगो को जीवन में इतनी बडी चोट सहनी पडी है। जिस की कल्पना बहुत बडी है, भाव की सघनता और गम्भीरता जिस की जितनी ही अधिक है उस को जीवन में उतनी ही भारी चोट भी लगती है। उन को कितनी बडी आशा छिन्न भिन्न हो गई। उन का विराट आयोजन बात की बात में धूल मे मिल गया। ऐसी दशा होने पर शिक्षित मन का भाव भी बहुत कुछ बदल जाता है, फिर सिपाहियों के मन पर यदि विषम आतङ्क का भाव अपना अधिकार जमा ले तो इस में कुछ विचित्रता नहीं। दोनो नेताओ ने सोचा कि यूरोपीय महासमर की उलझन के दिनो में भी—ऐसा बढिया सुभीता रहने पर भी—विप्लव

दल सारी तैयारी कर के कुछ भी नहीं कर सका। कौन जाने अब फिर कब ऐसा मौका मिलेगा!—किन्तु यह भयङ्कर चोट खाकर भी वे फिर कमर कस कर काम में लग गये। उन के हृदय की असीम आशा, हृदय का बल मानों घटना नहीं चाहता। इसी से वे फिर नये उत्साह से घोर अन्धकारावृत भारत आकाश के एकान्त कोने में अपने वक्ष स्थल की दीप शिखा के ही बल और भरोसे पर उस हताशाच्छन्न जीवन-मार्ग पर फिर आगे बढे। उन के दिल मे बडी गहरी चोट लगी थी किन्तु इस से उन के हाथ पैर नहीं फूल गये। इतने बडे मानसिक बल की मर्यादा को समझने वाले हम में कितने मनुष्य हैं। वीर की इज्जत करना वीर ही जानता है, इसी से भारत के विप्लवकारी दल को अगरेज जिस दृष्टि से देखते थे, या देखते हैं, उस दृष्टि से उस दल को कितने भारतवासी देख सकते हैं? भारतीय विप्लवपन्थी दल को भारतवासियो ने सदा उपेक्षा की दृष्टि से देखा है। यह लापरवाही भारतीय विप्लवकारी दल की छाती को, एक बडी वजनदार चट्टान की तरह, बडी बेदरदी से दबाया करती थी। उक्त दल की ऐसी अवज्ञा और किसी ने भी नहीं की। इस दल ने जिन से सब से अधिक सहानुभूति की आशा की उन्हीं ने उस की लानत मलामत की है किन्तु इतने पर भी दल ने हिम्मत नहीं छोडी। इस दल वालों के प्राण मानो किसी स्वप्नलोक की कल्पना से भरपूर थे, अपने प्राणो की पूँजी के सिवा इन्हे और किसी का भरोसा न था—यह बलवे की तैयारी बेकार तो हो गई थी किन्तु सफलता निष्फलता की कसौटी से किसी भी आन्दोलन पर विचार करना ठीक नहीं। इस आन्दोलन पर वि

कर दी गई। लाहौर मे जहाँ तहाँ खाना तलाशियाँ और गिरफ्तारियाँ होने लगीं। किसी सिक्स पर जरा सा सन्देह होते ही उसे सीधा थाने मे पहुँचाया जाता था। इसी तरह पकड धकड होने में कभी कभी दोनो तरफ से गोली चल जाती थी। दो ही चार दिन में मामला इस तरह सङ्गीन हो गया, अब दल में परस्पर एक दूसरे पर विश्वास करना कठिन हो गया।—कर्त्तारसिंह बुद्धिमान् युवक थे। लाहौर आते ही वे सीधे रासविहारी के डेरे पर पहुँचे और किसी भी स्थान पर नहीं गये। क्योंकि रासविहारी वाले मकान को बहुत कम आदमी जानते थे, इसलिए वह सब से अधिक सुरक्षित था। उस समय रासविहारी बडी उदासी से एक खाट पर मुर्दे की तरह पडे थे। कर्त्तारसिंह भी चुप चाप उन की बगल में पडी हुई एक खाट पर लेट रहे। थकावट के मारे उन का शरीर शिथिल हो रहा था। दोनों ही चुप थे। उन के उस म्लान मौन से बडी निदारुण मर्मस्थान की पीडा की बातें प्रकट होने लगीं। हम मे से कितने लोगो को जीवन मे इतनी बडी चोट सहनी पडी है! जिस की कल्पना बहुत बडी है, भाव की सघनता और गम्भीरता जिस की जितनी ही अधिक है उस को जीवन में उतनी ही भारी चोट भी लगती है। उन की कितनी बडी आशा छिन्न भिन्न हो गई। उन का विराट आयोजन बात की बात में धूल मे मिल गया। ऐसी दशा होने पर शिक्षित मन का भाव भी बहुत कुछ बदल जाता है, फिर सिपाहियो के मन पर यदि विषम आतङ्क का भाव अपना अधिकार जमा ले तो इस में कुछ विचित्रता नहीं। दोनों नेताओं ने सोचा कि यूरोपीय महासमर की उलझन के दिनों मे भी—ऐसा बढिया सुभीता रहने पर भी-विप्लव

हिन्दी भवन,लाहौर का संक्षिप्त सूचीपत्र

दम्पती परमर्श

दाम्पत्य विज्ञान (Sexual Science) सम्बन्धी पुस्तकों की संसार प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती मेरी स्टोप्स की प्रसिद्ध पुस्तक Radiant Motherhood का सरल हिन्दी अनुवाद । नव विवाहित दम्पतियों के लिए आवश्यक पुस्तक । इसमें 'प्रेमी की मधुर कल्पना' 'भावी माता की उलझनें और शारीरिक कष्ट' 'गर्भ और समागम' यन्त्रणा का द्वार' 'प्रसव और सौन्दर्य' इत्यादि २० महत्व पूर्ण विषयों पर वैज्ञानिक विवेचन किया गया है । मूल पुस्तक के ४ वर्षों में ही १४ संस्करण हो चुके हैं । नमूने की एक सम्मति यहां दी जाती है ।

'उन सैकड़ों स्त्रियों के लिए जो माता बनने वाली हैं, पर दाम्पत्य विज्ञान जिनके लिए एक गुप्त रहस्य है, तथा उन सैकड़ों नवयुवकों के लिए जो गृहस्थ आश्रम में पग रखने वाले हैं, यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है।' मूल्य १।=)सजिल्द १॥=) ।

प्रताप-प्रतिज्ञा

राष्ट्रीयभावों से ओतप्रोत मौलिक नाटक । लेखक श्रीयुत रवीन्द्र नाथ ठाकुर की प्रसिद्ध "विश्वभारती" के हिन्दी अध्यापक श्री जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिन्द' मूल्य ॥=) सजिल्द १) ।

न

१७०)

गदरकी तैया-

वीरता

करने के लिए यह देखना चाहिए कि इस आन्दोलन के पीछे कितने बड़े आदर्श की कल्पना थी और इस आदर्श को प्राप्त करने के लिए कितने व्यक्तियों ने प्राण की बाजी लगा कर कहाँ तक त्याग स्वीकार किया था। ऐसी ऐसी बातों पर ध्यान देकर ही इस आन्दोलन पर विचार किया जाना चाहिए। किस आदर्श की प्रेरणा से जागृत हो कर भारत के युवकों ने हथेली में जान लेकर यह खेल खेला और पजाब में गदर का उद्योग निष्फल हो जाने के पश्चात् भारत के विप्लव पन्थी दल का क्या स्वरूप हो गया था, तथा यूरोपीय महायुद्ध छिडने से पहले भारत मे बलवा करने की इच्छा रखने वाला दल बलवे की कैसी क्या तैयारी कर रहा था, यह सब बातें इस पुस्तक के दूसरे भागो में विचार करने की इच्छा है।

[समाप्त]

जादू का पिटारा

छोटे, छोटे बालकों के लिये सरल, मनोरंजक विनोदपूर्ण कविताओं की बढ़िया पुस्तक। मनोहर चित्र, रंगीन छपाई मूल्य। -)।

हमारी पाठ्य पुस्तकें

भारतीय इतिहास का भौगोलिक आधार

एक दम मौलिक तथा अगाध विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ। विद्वानों, आलोचकों ने जी खोल कर प्रशंसा की है हिन्दी साहित्य सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में पाठ्य पुस्तक। दाम बारह आना।

सत्य हरिश्चन्द्र सटिप्पण

भारतेन्दु कृत सत्यहरिश्चन्द्र नाटक का विद्यार्थी-उपयोगी सुसम्पादित संस्करण। पुस्तक की भूमिका में कवि, ग्रन्थ और पात्रों का संक्षिप्त परिचय और अन्त में नाटक सम्बन्धी परिभाषाएं, टिप्पणी (शब्दार्थ और भावार्थ) में संक्षेप में नाटक की कहानी दी गई है। मूल ग्रन्थ में भी नीचे पाद टिप्पणियां दी हुई हैं। मूल्य ।=)

सटीक मुद्राराक्षस नाटक

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कृत मुद्राराक्षस नाटक का विद्यार्थी उपयोगी सुसम्पादित संस्करण। पद्यों के अर्थों के सिवाय इस में नाटक के पात्रों का परिचय, नाटक की आलोचना नाटक सम्बन्धी परिभाषाए, भारतेन्दु की विस्तृत जीवनी तथा उनकी अन्य रचनाओं का संक्षिप्त परिचय भी दे दिया गया है। पृष्ठ संख्या लगभग २२५ मूल्य केवल १)

तथा त्याग की वातो मे मराठा और सिक्ख इतिहास को भी मात करता है। रासविहारी के वे कारनामे जिन्हे सुनते सुनते जज अपने नोट लिखना भूल जाते थे और कर्त्तारसिंह पिंगले नलिनी प्रताप आदि के शत्रु को भी मुग्ध करने वाले चरित्र पढना चाहे तो शीघ्र ही एक प्रति खरीदिये। कर्त्तारसिह पिंगले अमीरचन्द अवधविहारी आदि शहीदो के डेढ दर्जन दुर्लभचित्र भी अमेरिका जापान आदि से मगवा कर छापे गये हैं। प्रथम भाग ।।।) द्वितीय भाग १।=)।

स्वयं-स्वाथ्य-रक्षक

लेखक—श्रीयुत प्रेम मोहनलाल वर्म्मा,एम ए, वी एस सी एच एम वी एफ आर ई एस। स्वाथ्य विषयक अनूठी पुस्तक। प्रत्येक नवयुवक तथा नवयुवती के लिए अत्युपयोगी है। २०० पृष्ठो की पुस्तक का मूल्य ।।।=)

हमारी वालोपयोगी पुस्तकें

फुलवारी

वालकोपयोगी छोटी छोटी कहानिया। सरल भाषा पुस्तक भर में एक भी सयुक्त अक्षर नही है रग विरगी छपाई। पहला भाग ‐=) दूसरा भाग ।)।

फूलों की डाली

वालोपयोगी अनूठी कहानिया। रग विरगी छपाई। वच्चे एकवार हाथ मे लेकर पूरी पढे विना नहीं छोडेंगे। मू० ।=)मात्र

चुने हुए फूल

श्रीयुत प्रेमचन्द इत्यादि हिन्दी के प्रसिद्ध लेखकों की चुनी हुई सरल वालोपयोगी कहानियो का सग्रह। वढ़िया छपाई, फर्स्ट क्लास गेट अप, आठ हाफ टोन चित्र मूल्य केवल ।।)।